5वां जल सम्मेलन

9-12 नवम्बर '05

जल बिरादरी

सार-संक्षेप

संपादन : अरुण तिवारी

5वाँ जल सम्मेलन

9-12 नवम्बर'05

तरूण आश्रम, भीकमपुरा
अलवर

सार-संक्षेप

संपादन : अरूण तिवारी

प्रकाशक
जल बिरादरी

5वाँ
जल सम्मेलन : सार संक्षेप

संकलन
शीला डागा
क्लेयर उमराव
श्वेता
ईशा
योगाराम

छायांकन
देवयानी कुलकर्णी
राजनारायण मौर्य

संपादन
अरुण तिवारी

प्रकाशक
जल बिरादरी
34/46 किरणपथ
मानसरोवर
जयपुर-302020
टेली: 0141-2393178
ई मेल: jalbiradari2001@gmail.com

रूपांकन एवं मुद्रण
कुमार एण्ड कम्पनी
जयपुर

निवेदन

आप सभी जानते हैं कि जल बिरादरी पानी से तनिक भी आत्मीय सरोकार रखने वाले साथियों का संगठन है। यह सही है कि रचना के जमीनी काम ही हमारी मूल शक्ति है। इन्हें हमें करते रहना चाहिए। इसमें कमजोरी कतई नहीं आनी चाहिए, लेकिन पानी की कुनीति, लूट, और बाजारीकरण सरीखे नए संकटों का समाधान भी हमारी नैतिक जिम्मेदारी है। आपसी संवाद और आत्मीयता बनाए बगैर प्रकृति के प्रति इस जिम्मेदारी का निर्वाह हमें असंभव दिखता है। स्वयंसेवी संगठन, सरकार, समाज..... सभी के बीच प्रकृति हित में एक सुरीली सुंगध बनी रहे, इसके लिए जलबिरादरी छोटे-बड़े स्तर पर संवाद के मंच भी खड़े करती रही है। संवादहीनता भ्रम पैदा करती है। इस जल सम्मेलन का उद्देश्य भी संवादहीनता को तोड़कर लोगों को जोड़ना ही था । पहले हमने सोचा था कि राष्ट्रव्यापी जल परिदृश्य, जल बिरादरी की भूमिका व संगठन को सुदृढ़ करने पर ही चर्चा करेंगे, लेकिन 9-10 नवम्बर '06 के संवाद से निकले परिदृश्य से समझ में आया कि पानी के नए संकट पूरे देश में हावी हैं। इनसे निपटे बगैर ज़मीनी काम बचेंगे नहीं। लूट का बाज़ार हमारी परंपरागत ज़मीनी संरचनाओं को भी बहा ले जाने की कोशिश में है। हालांकि भारत की पारंपरिक समृद्धि व ज्ञान इतने कमज़ोर नहीं कि कोई भी हवा का झोंका उन्हें उड़ा ले जाए; फिर भी समय से पहले समय का अंदाज कर लेना ही भारत का ज्ञान है। ऐसी दूरदृष्टि ही संकट से बचाती है। इसी से शिक्षा लेते हुए सम्मेलन के मुख्य सत्र (11-12 नवम्बर) में हमने पानी के संकट व समाधान पर खुलकर चर्चा की। मुझे खुशी है कि सम्मेलन में आए सभी प्रतिभागियों ने अत्यंत संजीदगी और संवेदना के साथ चर्चा में अपनी भूमिका निभाई। सभी का नि:संकोच भाव से स्पष्ट राय रखना, अच्छा लगा। कई मामलों पर बिरादरी में सर्वसम्मति बन सकी, इसे मैं उपलब्धि मानता हूँ। सम्मेलन में जो साथी शामिल हुए, उनका धन्यवाद कहना चाहता हूँ, लेकिन जो शामिल नहीं हो सके, उन तक भी सम्मेलन की चर्चा पहुँचे... आगे वे भी इसमें अपनी भूमिका निभाएँ। इसके लिए दस्तावेजीकरण जरूरी था। यह दस्तावेज इसी का प्रयास है। इसके लिए तरुण जल विद्यापीठ, अलवर (राज.) तथा ग्रामीण प्रबंधन संस्थान (इरमा), आनंद (गुजरात) के विद्यार्थी तथा उन सभी को धन्यवाद, जिनके प्रयास से सम्मेलन का सार-संक्षेप हम आप तक पहुँचा पा रहे हैं।

आपका

राजेन्द्र सिंह

अध्यक्ष, जलबिरादरी

परिचय

जल हेतु एक राष्ट्रव्यापी भाईचारा बनाने की एक पहल है-जल बिरादरी । जल बिरादरी के गठन का विचार सर्वप्रथम 23-24 मार्च, 2001 को विज्ञान पर्यावरण केंद्र, नई दिल्ली में आयोजित देश भर के पानी का काम करने वाले समुदाय के प्रतिनिधियों की बैठक में आया। श्री राजेन्द्र सिंह (अध्यक्ष, तरुण भारत संघ) के नेतृत्व में एक अनौपचारिक संगठन के रूप में इसका शुभारम्भ वर्ष-2001 में ही हुआ। संगठन की आर्थिक एवं औपचारिक जरूरतों के मद्देनजर व सदस्यों की राय पर इसे दिनांक 26 अगस्त, 2005 को राजस्थान सार्वजनिक प्रन्यास अधिनियम 1959 के अधीन 'जल बिरादरी' के नाम से पंजीकृत कराया गया। आज जल-जंगल-जमीन विशेषज्ञ, समाजशास्त्री, शोध संस्थान, स्वयंसेवी संगठन, छात्र, किसान एवं ऐसे सभी प्रबुद्ध जन जिनका पानी से तनिक भी आत्मीय सरोकार है, वे सभी इसका हिस्सा बने हैं। आगे भी ऐसे सभी जन जल बिरादरी के सदस्य बन सकते हैं। बिरादरी की नींव मुख्य रूप से प्रकृति से इसके रिश्ते पर टिकी है।

जल बिरादरी का विश्वास है कि अपनी जीवन शैली को प्रकृति के नजदीक रखकर ही हम प्रकृति संरक्षण व समृद्धि में सहायक भूमिका निभा सकते हैं। पानी प्रकृति का निर्माण करने वाले पंच महाभूतों में से एक है। भारतीय संस्कृति में पंच महाभूतों को माता-पिता व देव सरीखे संबोधनों से संबोधित करने का कारण दोनों के बीच जीवंत रिश्ता ही है। ऐसे जीवंत रिश्ते बनाने वाला समाज भला पानी को मुनाफे के लिए बिक्री की वस्तु कैसे बनने दे सकता है ? मुनाफा, बिक्री और वस्तु... ये तीनों रिश्ते की संवेदना को नहीं पहचानते। जल के प्रति रिश्ता, संवेदना और समझ पैदा किए बगैर जल को सहेजने की कोई तकनीक कामयाब नहीं हो सकती। जल के प्रति रिश्ता, संवेदना और समझ बढ़ाने के लिए राष्ट्रव्यापी भाईचारा जरूरी है। राष्ट्रव्यापी भाईचारे से ही जल स्वराज हासिल हो सकता है।

जल बिरादरी का दृढ़ विश्वास है कि जल स्वराज ही कल ग्राम स्वराज और सुराज दोनों हासिल करने का मार्ग प्रशस्त करेगा। यही जल बिरादरी का मूल उद्देश्य है। इसके तहत् जल सम्मेलन, पदयात्रा, जल साक्षरता अभियान व अन्य जमीनी-जागृति अभियानों के जरिए जल बिरादरी देश की जल नीति-कार्यक्रमों को जनहित के अनुकूल बनाने के साथ-साथ छोटी जल संरचनाओं की रचना के प्रयास भी करती रही है। यही इसका परिचय है !... यही इसकी तस्वीर !!

पूर्व राष्ट्रीय जल सम्मेलन

20-22 अप्रैल, 2001	**जयपुर, (ग्राम नीमी)**- जल बिरादरी का औपचारिक श्रीगणेश।
5-6 मार्च, 2002	**नई दिल्ली, निजामुद्दीन** (स्काउट-गाइड परिसर)-राष्ट्रीय जल नीति के प्रति समझ एवं जन जागरण।
1-2 अप्रैल, 2003	**महाराष्ट्र, वर्धा** (सेवाग्राम) जल के नीतिगत मसलों पर जन जागृति।
25-26 जून, 2004	**नई दिल्ली, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग** (गांधी शांति प्रतिष्ठान)-जल के निजीकरण-व्यावसायीकरण और नदीजोड़ परियोजना पर नई सरकार को दिए जाने वाले ज्ञापन के प्रारूप की तैयारी।

5वाँ जल सम्मेलन

9-12 नवम्बर, 2005	राजस्थान, अलवर, भीकमपुरा(तरुण आश्रम)-राज्यवार जल परिदृश्य और निष्कर्ष स्वरूप निकले आम महत्व के खास मुद्दों पर रायशुमारी; तद्नुसार जल बिरादरी हेतु प्राथमिकता क्षेत्रों एवं क्रियाकलापों का निर्धारण।

5वें सम्मेलन की आवश्यकता क्यों ?

कभी-कभी औपचारिकता चिंतन को जन्म देती है और चिंतन हमें सतत रूप से सक्रिय करता है। चिंतन ने मजबूर किया कि यदि जल बिरादरी को सक्रिय होना है तो जल बिरादरी पहले खुद अपने संगठन, कार्यक्रम, कमजोरी, खूबियों और चुनौतियों का आकलन करे। बीते पांच वर्ष भारत में जल संकट के नए कारण व कारक निर्माण करने वाले वर्ष रहे हैं। पानी पर समाज के परंपरागत मालिकाना हक पर पड़ती वैश्वीकरण और निजीकरण की छाया ने भी नई चुनौतियाँ पेश की हैं। नदी जोड़ परियोजना तथा अलग-अलग नाम व मकसद वाली विदेशी कर्ज /अनुदान आधारित बड़ी-बड़ी जल परियोजनाओं के रूप में नई जल नीति की कई संतानें पैर पसारने को आतुर दिखाई दे रही हैं। अत: इन पांच वर्षों के दौरान जल परिदृश्य में आए राज्यवार बदलाव को जानना भी जरूरी था।

ये सारी जागृति.... ये सारी चेतना सिर्फ इसलिए जागी, चूंकि चिंतन बार-बार कहता मालूम हुआ कि अब संकट सिर पर खड़ा है। अब तथ्यों की सच्चाई स्पष्ट रूप से जानना और कहना जरूरी है। अभी नहीं जागे...अभी नहीं कहा... तो फिर शायद काफी देर हो जाएगी। इसके लिए देशभर के संकल्पित जनों को एक जगह पर जुटना जरूरी था। समय भी पर्याप्त हो। तभी ठीक से बात हो सकेगी। सभी की राय जानकर ही मुट्ठी बंध सकेगी। जिन मुद्दों पर सभी एकमत होंगे, उसी दिशा में कदम बढ़ सकेंगे। इन्हीं सब विचारों ने पांचवें राष्ट्रीय जल सम्मेलन का आमंत्रण का पत्र टाइप किया।

सार संक्षेप

सम्मेलन के चार दिन बीतते-बीतते यह महसूस होने लगा था कि ऐसी चिंता हर जगह है। जल बिरादरी के रजिस्टर में दर्ज 947 जल प्रतिनिधियों का ब्यौरा कहता है कि इस सम्मेलन में शामिल मुद्दों पर पूरे देश में एक अजीब सी बेचैनी है। करीब 22 राज्यों के जल प्रतिनिधियों ने इस सम्मेलन में भागीदारी दर्ज की। दिनांक 9-10 नवम्बर, 2005 तक सभी राज्य-नदी-क्षेत्रीय जल बिरादरियों ने अपने क्षेत्रों के जल परिदृश्य, मुद्दों, विवादों और अपनी गतिविधियों का ब्यौरा रखा। नौ तथा दस नवम्बर की चर्चा के दौरान कुछ विषय ऐसे उभरकर सामने आए, जो बहुमत के आधार पर लगभग हर राज्य-क्षेत्र को कम अथवा ज्यादा प्रभावित कर रहे हैं। ये मुद्दे हैं:

(1) निजीकरण-व्यावसायीकरण (2) नदी जोड़
(3) जल प्रदूषण (4) जल नीति व कानून
(5) जल विवाद व समाधान (6) विकेन्द्रीकृत सामुदायिक जल प्रबंधन
(7) जल साक्षरता की जरूरत (8) जल बिरादरी की भूमिका

तय हुआ कि 11-12 नवम्बर के मुख्य सत्रों में इन्हीं मुद्दों पर व्यापक चर्चा हो; आम सहमति के बिंदु तय हों और उन पर सम्मेलन एक घोषणा पत्र जारी करे। घोषणा पत्र जल बिरादरी की ग्राम स्तर से लेकर केन्द्र स्तर तक सभी इकाइयों के लिए नीति निर्देशक तथ्यों के रूप में मान्य होगा।

ठोस चर्चा के लिए इन मुद्दों पर छोटे-छोटे समूहों में परिचर्चा भी इस सम्मेलन का हिस्सा बनी। छोटे-छोटे समूह, मंच, क्षेत्र भ्रमण व रात्रि विश्राम के दौरान हुए परस्पर सम्वादों ने इस पूरे सम्मेलन को वैचारिक रूप से समृद्ध व निर्णायक बनाने में मदद की। इसका विस्तार आप अगले पन्नों पर पा सकेंगे।

अच्छा होता कि इस सम्मेलन में शामिल सभी 947 प्रतिभागियों की सूची व संपर्क-पता आदि हम यहां प्रकाशित कर पाते। पंजीकरण रजिस्टर में अस्पष्ट लिखावट, पते व नाम दर्ज होने के कारण यह संभव नहीं हुआ, लेकिन सम्मेलन के मुख्य वक्ताओं के नाम से सभी को परिचित कराने का दायित्व निर्वाह जरूरी है। अत: मुख्य वक्ताओं की सूची प्रकाशित कर रहे हैं।

मुख्य वक्ता

1. **श्री सिद्धराज जी ढढ्ढा** (राजस्थान) प्रसिद्ध गांधीवादी नेता एवम् चिंतक, जयपुर
2. **श्री राजेन्द्र सिंह** (राजस्थान) अध्यक्ष, तरुण भारत संघ, अलवर
3. **श्री विजय शंकर व्यास** (राजस्थान) प्रख्यात नीतिज्ञ, जयपुर
4. **श्री डी.सी. सामन्त** (राजस्थान) अतिरिक्त मुख्य सचिव, राजस्थान सरकार, जयपुर
5. **प्रो. एम. एस. राठौड़** (राजस्थान) विकास अध्ययन संस्थान, जयपुर
6. **श्री निरंजन सिंह** (राजस्थान) शेखावाटी जल बिरादरी, झुन्झुनुं
7. **श्री कन्हैया लाल गुर्जर** (राजस्थान) महासचिव, तरुण भारत संघ, अलवर
8. **श्री अर्जुन गुर्जर** (राजस्थान) अध्यक्ष, अरवरी संसद, अलवर
9. **श्री रघुहरि डालमिया** (राजस्थान) उद्योगपति, शेखावाटी
10. **प्रो. वरुण आर्य** (राजस्थान) निदेशक,अरावली प्रबन्धन संस्थान, जोधपुर
11. **श्री अनुपम मिश्र** (दिल्ली) सचिव, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान
12. **श्रीमती सविता गोखले** (दिल्ली) अर्थकेअर फाउण्डेशन
13. **श्री अरविन्द केजरीवाल** (दिल्ली) परिवर्तन संस्था
14. **श्री जेड्. हसन** (दिल्ली) पूर्व सचिव, जल संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार
15. **श्री एन.के. भण्डारी** (दिल्ली) मुख्य अभियंता, राष्ट्रीय जल विकास एजेन्सी
16. **प्रो. कान्ता प्रसाद** (दिल्ली) तत्कालीन सदस्य नदीजोड़ कार्यदल
17. **श्री के.पी. गुप्ता** (दिल्ली) भारत सरकार
18. **सुश्री नीलम गुप्ता** (दिल्ली) पत्रकार, जनसत्ता
19. **श्री अरुण तिवारी** (दिल्ली) मीडियामैन सर्विसेज, दिल्ली
20. **श्री अरुण श्रीवास्तव** (दिल्ली) परियोजना सलाहकार
21. **श्री चंदन पाल** (बंगाल) गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, पश्चिम बंगाल
22. **श्री शकील अहमद** (बंगाल) पीपल्स मूवमेन्ट फॉर सिविल राइट्स
23. **श्री कुमार कलानन्द मणि** (गोवा) पीसफुल सोसायटी, कुण्डई
24. **श्रीमती अमला रुइया** (महाराष्ट्र) आकार चेरिटेबल ट्रस्ट, मुम्बई
25. **श्री धनंजय धवड़** (महाराष्ट्र) मुख्य अभियंता, लोक निर्माण विभाग, अमरावती
26. **श्री प्रफुल्ल कदम** (महाराष्ट्र) महाराष्ट्र जल बिरादरी, सोलापुर

27. श्री सदानन्द पाटिल (महाराष्ट्र) महाराष्ट्र जल बिरादरी, कोल्हापुर
28. श्री श्रीपाद धर्माधिकारी (मध्य प्रदेश) मंथन, बड़वानी
29. श्री नीलेश देसाई (मध्य प्रदेश) सम्पर्क, झाम्बुआ
30. श्री भगवान सिंह परमार (मध्य प्रदेश) ग्रामीण कला एवम् तकनीकी संस्थान, छतरपुर
31. सुश्री प्रीति पोरवाल (मध्य प्रदेश) सामाजिक कार्यकर्त्ता
32. श्री राजेन्द्र यादव (हरियाणा) अध्यक्ष हरियाणा जल बिरादरी, चरखी दादरी
33. श्री इब्राहिम (हरियाणा) सरपंच-बघौला, फिरोजपुर
34. श्री शमशेर सिंह बिष्ट (उत्तरांचल) उत्तराखण्ड लोक वाहिनी, अल्मोड़ा
35. श्री अनिल गौतम (उत्तरांचल) लोक विज्ञान संस्थान, देहरादून
36. श्री सुरेन्द्र दत्त भट्ट (उत्तरांचल) ग्राम स्वराज संघ, उत्तरकाशी
37. सुश्री लिआंजी एन.जोन (नगालैण्ड) सी.इ.इ.आर.पी., दीमापुर
38. श्री रणधीर देब राय (त्रिपुरा) कस्तूरबा गांधी नेशनल मेमोरियल ट्रस्ट, त्रिपुरा शाखा
39. श्री बी.एस. भवानीशंकर (कर्नाटक) अध्यक्ष-सहयोग, बंगलूर
40. डा. एन. गोपी (आन्ध्र प्रदेश) पूर्व उपकुलपति, उस्मानिया विश्वविद्यालय
41. श्री प्रभात कुमार (बिहार) किसान विकास ट्रस्ट, पटना
42. श्री चन्द्रशेखरम (बिहार) समता, खगड़िया
43. श्री उमेन्द्र दत्त (पंजाब) खेती विरासत मिशन, फरीदकोट
44. श्री प्रेमजी भाई पटेल (गुजरात) वृक्ष प्रेम, उपलेटा
45. डा. मुकेश येंगल (छत्तीसगढ़) रिएक्ट संस्था, रीवां
46. श्री सुरेश रैकवार (उत्तर प्रदेश) कृषि एवं पर्यावरण विकास संस्थान, बांदा
47. डा. कृष्ण पाल सिंह (उत्तर प्रदेश) हिंडन जल बिरादरी
48. श्री विवेक उमराव (उत्तर प्रदेश) इंजीनियर, फतेहपुर
49. श्री अभिमन्यु सिंह (उत्तर प्रदेश) सेवाश्रम, कर्वी चित्रकूट
50. श्री अरविन्द कुशवाहा (उत्तर प्रदेश) अध्यक्ष, उत्तर प्रदेश जल बिरादरी, घाटमपुर

हमारा कर्त्तव्य

॥ समझना, समझाना, रचना और सत्याग्रह ॥

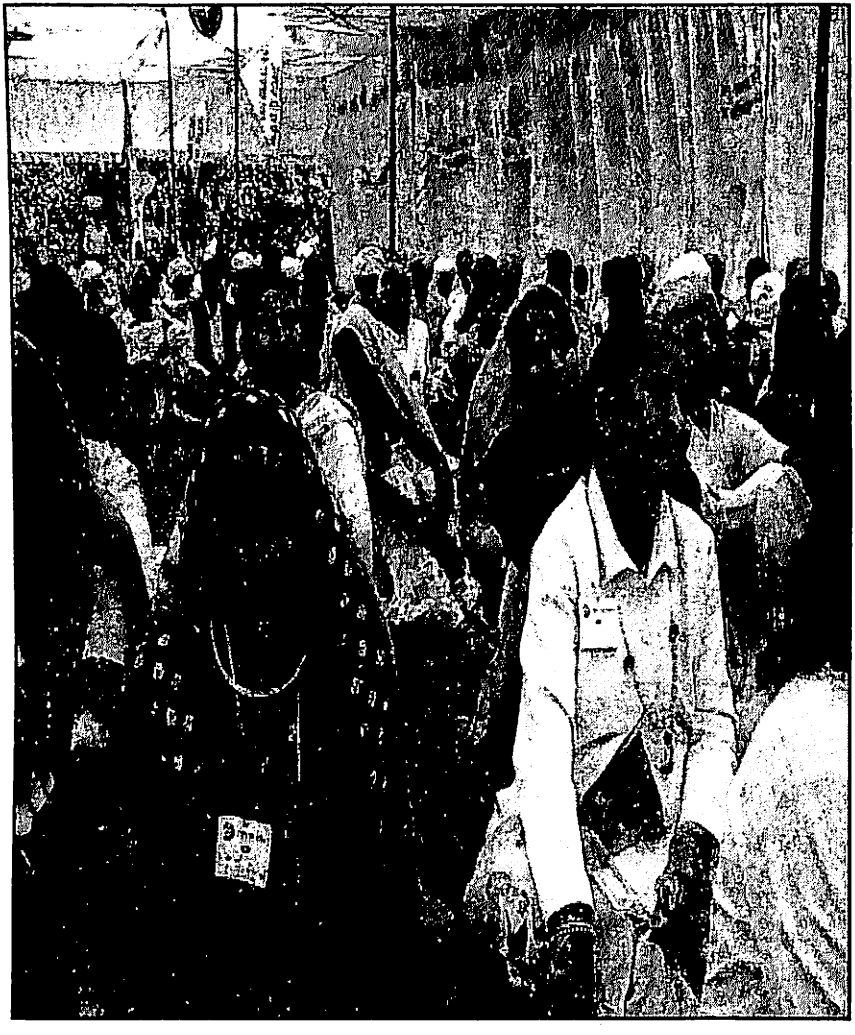

राज्यवार जल परिदृश्य

- पंजाब
- हरियाणा
- दिल्ली
- राजस्थान
- गुजरात
- मध्यप्रदेश
- छत्तीसगढ़
- उत्तरप्रदेश
- उत्तरांचल
- बिहार
- झारखण्ड
- उत्तर-पूर्वी राज्य
- पश्चिम बंगाल
- महाराष्ट्र
- आन्ध्रप्रदेश
- दक्षिण तटीय राज्य

पंजाब

पंजाब के नामकरण का आधार ही पानी है। पंजाब यानी पांच आब!.... पांच नदियों का प्रदेश। जिन चार क्षेत्रों को मिलाकर पंजाब बना है, वे सभी पानी की नींव पर टिके हैं- मझा, मालवा, दोआब और पोआब। लोक मान्यता है कि पंजाब में पानी पंजा साहेब से आया। दंत कथा है कि एक बार बाबा नानक साहब ने भाई मर्दाना से अपने लिए पानी माँगा। वह बाबा के लिए पानी लाने गए, लेकिन लोगों ने पानी नहीं दिया। चमत्कार हुआ कि बाबा जहाँ थे, उनके पैरों के नीचे से वहीं जल बहना शरू हो गया। उस स्थान को 'पंजा साहेब' कहा गया।

ऐसी दंत कथाएँ पंजाब में पानी का महत्व बताती हैं। पंजाब में तो परंपरा से ही दूसरों को पानी पिलाने की संस्कृति रही है। गुरुपर्व पर बिना किसी भेदभाव के आपस में छबील बाँटने की रस्म इसी को दर्शाती है। तालाबों के निर्माण का चलन भी यहां पहले से ही है। सुनाम शहर का अत्यंत विशाल तालाब आज भी प्रसिद्ध है। गुरुद्वारों में भी पानी के ताल, छोटे कुण्ड का चलन रहा है। 'सर' का मायने तालाब होता है। अमृत जैसा पानी होने के कारण ही एक तालाब का नाम अमृतसर पड़ा। इसकी ख्याति इतनी हुई कि यहां बसे शहर का नाम भी अमृतसर हो गया।

इस बीच हमारे विकास की नई पढ़ाई..... नई परिभाषा ने पंजाब की खेती और जीवन शैली को आक्रामक रूप से प्रभावित क्या किया.... पंजाब ने प्राकृतिक दोहन की हर हद लांघ ली है। हरित क्रांति ने पंजाब के गोदाम तो भर दिए, लेकिन पानी की समृद्धि संजोने का मानस खाली कर दिया। तेजी से होते भूजल दोहन और पानी की अनावश्यक बर्बादी..... दोनों ने मिलकर पंजाब में भावी जल संकट के संकेत देने शुरू कर दिए हैं। गहरे नलकूपों की संख्या 55 हजार से बढ़कर 12 लाख तक पहुंच गई है। पंजाब में फिरोजपुर आदि मालवा क्षेत्र में फ्लोराइड समेत अन्य प्रदूषक तत्वों की पानी में मौजूदगी स्पष्ट दर्ज होने लगी है। संगरूर, भटिंडा.... मालदा में कैंसर के मामले बढ़े हैं। पंजाब इस बात का जीता-जागता उदाहरण है कि किसी के पास कितना भी पानी हो, उसके उपयोग में संयम न बरता गया, तो एक दिन पानी का संकट आयेगा ही। पंजाब में एक ओर जहां ज्यादा पानी से जमीन बर्बाद हो रही है, वहीं दूसरी ओर राज्य के 138 विकास खण्डों में से 38 डार्क-जोन बन गये हैं। इसलिए अब

पंजाब अपने पेयजल को दूसरों को देने के पक्ष में नहीं है। यह विवाद की शुरुआत है। हालांकि हम जानते हैं कि हरियाणा को पानी न भी दिया गया, तो भी ये डार्क जोन रुकेंगे नहीं।

राज्य में तेजी से बढ़ते डार्क जोन और जल प्रदूषण की चेतावनी है कि हरित क्रान्ति का सर्वाधिक झंडा बुलन्द करने वाले इस राज्य को अब अपना फसल-चक्र बदलना ही होगा। खेती में देसी खाद और कम पानी का फसल-चक्र न अपनाया गया, तो न पंजाब का पानी बचेगा और न खेती। यह दुर्भाग्य है कि कभी दूसरों को पानी पिलाने वाला यह पंचनद प्रदेश आज खुद जलाभाव के रास्ते पर है। पानी के लिए ऋण लेने और फिर ऋण न चुका पाने की मजबूरी में आत्महत्या की घटनाएं भी पंजाब जैसे समृद्ध सूबे के माथे पर कलंक ही हैं। जल संरक्षण में जनभागीदारी सुनिश्चित करने के लिए पंचायती स्तर पर विषय की समझ व जागरण आवश्यक है। दूसरे राज्य भी पंजाब के कष्ट से सीखें।

पंजाब जल बिरादरी ने "पानी बचाओ-पंजाब बचाओ" का नारा दिया है । बिरादरी लोगों को बता रही है कि वे पानी की राजनीति से नहीं, पानी की आत्मा से जुड़ें। पंजाब यदि अपना पानी ठीक से संजोकर संयमित उपयोग करे, तो वह पानी का दानदाता बना रह सकता है। तब सतलुज-यमुना लिंक नहर की राजनीति में फंसने की जरूरत नहीं रहेगी। बाबा सींचवाल के प्रयासों से कभी जीवित हुई पवित्र नदी की याद दिलाकर पंजाब जल बिरादरी जल संजोने, पानी की बर्बादी रोकने और पानी पर समाज के अधिकार का अभियान चला रहे हैं, लेकिन इस अभियान से जन-जुड़ाव अभी कम ही है।

हरियाणा

पंजाब की तरह हरियाणा में भी दोआब का क्षेत्र है। सरस्वती और गंगा के बीच के 48 कोस के जिस इलाके को पहले-पहल कौरवों ने कृषि योग्य बनाया, उसे ही कुरुक्षेत्र कहा गया। यह इलाका आज भी कृषि योग्य है। करनाल में भी यमुना नदी के चलते खूब पानी है, लेकिन करनाल अब धीरे-धीरे भूल रहा है कि कैसे सदियों तक कोई मिट्टी और पानी खेती योग्य बने रह सकते हैं। थार रेगिस्तान की ऊपरी वायु व उच्चताप के निकट होने के कारण हरियाणा के कई स्थानों में वर्षा कम होती है। शिवालिक के पहाड़ी क्षेत्र व मैदानी

भाग में तो बारिश अच्छी होती है, लेकिन राजस्थान से लगे पश्चिमी रेतीले भाग तथा अरावली की शुष्क पहाड़ियों से सटे दक्षिणी हरियाणा में वर्षा काफी कम रहती है। हरियाणा का उत्तरी क्षेत्र अवश्य अधिक वर्षा का क्षेत्र है। पांच प्रमुख नहरों, आठ छोटी-बड़ी नदियों, चार मुख्य झीलों और हजारों तालाबों के बावजूद आज हरियाणा का बड़ा इलाका पानी के नए-पुराने दोनों तरह के संकट से जूझ रहा है।

कारण पांच ही हैं : ❋ खेती और उपयोग में पानी का अति दोहन❋ प्रदूषण ❋ परंपरागत पंचायतों के संगठन में आई कमज़ोरी ❋ परंपरागत जल संरचनाओं की लगातार उपेक्षा ❋ पानी के लिए सरकार की ओर देखने की आदत अर्थात सरकार पर निर्भरता।

सच यह है कि जब तक देश आजाद नहीं हुआ था, समाज में एकजुटता थी। हरियाणा की सर्वखांप पंचायत प्रदेश की सर्वोच्च प्रतिनिधि परिषद के तौर पर मजबूत थी। आज़ादी के बाद धीरे-धीरे यह गौरव ढह गया। जैसे-जैसे समाज की पाल टूटी, वैसे-वैसे तालाबों की पालें और समाज का ज्ञान भी टूट गया। परिणामस्वरूप हरियाणा का अपना पानी उससे रूठ गया। वर्ष-1947 से पहले हरियाणा में पानी तो था, लेकिन पानी के विवाद नहीं थे। अंग्रेजों के आने से पहले पंजाब-हरियाणा में सात लाख तालाब थे। अब उल्टा है। पानी निकासी के इतने बोर हैं कि कहना मुश्किल है। 1955 में रावी-व्यास विवाद पर पंजाब-हरियाणा आपस में क्या बंटे, तमाम स्तर पर हुई पहल-दखल भी आज तक जल-विवाद का निपटारा नहीं कर सके। वर्ष-2004 में सतलुज-यमुना लिंक नहर निर्माण को लेकर सुप्रीम कोर्ट द्वारा हरियाणा के पक्ष में जारी आदेश को भी पंजाब विधान सभा ने झुठला दिया।

यहां यह कहना जरूरी है कि हरियाणा-पंजाब जल विवाद का लंबा इतिहास-राजनीति अपनी जगह है और एक अकाट्य सत्य अपनी जगह। सच यह है कि यह लिंक पूरा हो भी जाए, विवाद सुलझ भी जाए..... बावजूद इसके यह जोड़ पूरे हरियाणा को पानी पिलाने की क्षमता नहीं रखता। यह अक्षमता ही सतलुज-यमुना जोड़ को हरियाणा के लोगों के लिए कभी जीवन-मरण का प्रश्न नहीं बनने देगी। अत: रावी-व्यास पर टिकी 18 लाख एकड़ भूमि के खेतिहरों को जल विवाद के निपटारों का इन्तजार नहीं करना चाहिए।

हरियाणा के लोगों को एहसास दिलाना होगा कि वे उपलब्ध जल पर अपना अधिकार जानें और उसी से जीवन चलाने का संयम हासिल करें। यह बात सबसे ज्यादा यमुना किनारे के

करनाल-हिसार में धान की खेती करने वाले इलाके को समझनी होगी। हरियाणा राज्य सरकार की नीति कहती है कि प्रत्येक गांव को पाइप लाइन के जरिए पानी प्राप्त हो। सरकार ने इसके लिए 700 करोड़ खर्च करने की योजना भी बनाई है। लोगों को बताने की जरूरत है कि पीने के पानी के लिए 200 कि.मी. लम्बी नहर से पानी नहीं आना चाहिए, बल्कि आसमान से बरसे पानी को धरती के पेट में डालने से ही जीवन चल सकता है। राजस्थान की भाँति हरियाणा में भी विकेन्द्रीकृत जल प्रबन्धन ही सर्वश्रेष्ठ विकल्प बनेगा। यहां जन संचार के माध्यमों को जोड़कर तत्काल शिक्षण-प्रशिक्षण के जरिए जनजागरण पहली जरूरत है। जल बिरादरी महिलाओं, किसानों एवं नौजवानों को लक्ष्य बनाकर लगातार जल संवाद पर लगी है। दूसरे प्रदेशों के गांवों की तुलना में हरियाणा को जल साक्षरता की ज्यादा जरूरत है। हाँ ! सरकार, हरियाणा के नौजवानों और किसानों को जिस दिन यह बात समझ में आ गई, उस दिन उन्हें किसी की सहायता की जरूरत नहीं होगी। वे सब कुछ स्वयं कर लेंगे। यह विश्वास है, क्योंकि हरियाणा की पंचायतें अभी मरी नहीं हैं। यह बात और है कि वे अपनी ताकत और उसके सिद्धान्तों को भूल गई हैं।

दिल्ली

दिल्ली से देश का राज चलता है। जैसा राज करता है, वैसा ही समाज। अत: दिल्ली की उलट-बासी आज देश के दूसरे हिस्सों में भी दिखाई दे रही है। पहले दिल्ली के पास अपना पानी था। बावड़ियाँ, कुएं, तालाब, झीलें..... सभी कुछ था। जब अंग्रेज दिल्ली में आए, तब दिल्ली में 350 तालाब थे। ये तालाब ही दिल्ली को पानी पिलाते थे... बाढ़ से बचाते थे। पहले सभी ने अपनी जरूरत के मुताबिक तालाब बनाए थे। अंग्रेजों के आने से पहले जनगणना का चलन नहीं था। घर कितने थे.... इससे मतलब नहीं, हाँ ! एक आदर्श गांव के विकास के लिए कितने तालाब हों, इसका आंकड़ा अवश्य मिलता था। लोगों को तालाब प्रिय थे।

1910 तक दिल्ली में एक गीत गाया जाता था " फिरंगी नल ना लगायो.... ।" अब तो नलों के जरिए जलापूर्ति एक सुविधा सम्पन्न गांव की निशानी मान ली गई है। अब तालाब नहीं बचे। जब तालाब ही नहीं बचे, तो कुएं ही कैसे बचते? वर्षा का जो थोड़ा-बहुत जल

असमतल भूगोल और खुली मिट्टी के जरिए धरती के भीतर जाता था, वह भी धीमा पड़ गया। वर्षा में कमी आई है। गहरे स्थानों को 'डम्प एरिया' घोषित कर उनमें कचरा भरा जा रहा है। आबादी, महंगाई और आधुनिकता का दबाव इतना अधिक है कि घर-बाहर... सड़क-चौबारे कहीं भी एक इंच ज़मीन कच्ची छोड़ना फैशन के खिलाफ माना जाता है। कंक्रीट में बदली हरित भूमि का अपना पानी बचे तो बचे कैसे? दिल्ली का अपना पानी सहेजकर रखने वाली खारी बावड़ी, हौजखास, हौज काज़ी, शाहदरा झील, नज़फगढ़, निजामुद्दीन, बारहखंभा समेत तमाम इलाकों पर आबादी बसा दी गई है। यमुना में सीवेज और म्युनिसपलिटी की कचरा निपटान संबंधी अक्षमता तो अन्य ख़ास संकेत हैं ही।

पांच दशक पहले की ऐसी आबादी को हटाकर जल संरचनाओं को परंपरागत रूप में वापस लाने को सुनिश्चित करता सुप्रीम कोर्ट का एक ठोस फैसला तो है, लेकिन इसका लाभ लेने की इच्छा शक्ति दिल्ली के पास कहां ? राजनीति को प्रकृति की चिंता नहीं है। दरअसल दिल्ली का समाज भी भूल गया है कि समाज के विमुख होने पर स्थानीय प्राकृतिक स्रोत भी विमुख हो जाते हैं। आज देखें तो शहर तो शहर... दिल्ली के देहात के पास भी अपना पानी नहीं है। सरकार के ऊपर निर्भरता ने परम्परागत भूजल के विकेन्द्रीकृत प्रबंधन ढांचे को ध्वस्त कर दिया है। पानी, बिजली और हवा के लिए दिल्ली पूरी तरह दूसरों पर निर्भर है। दिल्ली के पास पैसा है। अत: दिल्ली की सरकार जिसे पानी पिलाना चाहती है, उसके लिए हरियाणा, उ.प्र., उत्तरांचल तक से पानी खरीदकर पानी पिलाने की बात करती है। वह गांवों को भी पाइप लाइनों से ही पानी पिलाना चाहती है। यहां के मंत्री-सचिव दुनिया के दूसरे देशों से जो भी मॉडल देखकर आते हैं, उन्हें दिल्ली की धरती पर उतारना चाहते हैं; चाहे वे व्यावहारिक हों या नहीं।

दिल्ली की सबसे बड़ी समस्या यह है कि धरती के भीतर बहता यमुना का पानी दिल्ली ने लील लिया है और उसके ऊपर जो थोड़ा-बहुत पानी दिखता है, उसे कचरा घर बना दिया है। दिल्ली को शर्म आनी चाहिए कि यमुनोत्री से लेकर प्रयाग तक अपनी यात्रा में यमुना जितना कचरा ढोती है, उसका 80 प्रतिशत प्रदूषण दिल्ली के वजीराबाद पुल से लेकर ओखला बैराज के बीच इसमें मिलता है। यमुना नदी न होकर कचरा ढोने वाली रेल बना दी गई है।

दिल्ली के लोगों को जल समस्या का एक ही हल दिखता है कि जब नलों में पानी न आए तो गहरी बोरिंग करा लो। पैसे खर्च करो और धरती से पानी निकाल लो; लेकिन पैसे का यह दंभ अब टूटने लगा है। वंसत विहार, महरोली, हौजख़ास आदि क्षेत्र भूजल की भारी कमी के संवेदनशील क्षेत्र घोषित हो गए हैं। डिफेंस कॉलोनी जैसे पॉश इलाके का भूजल खारेपन का शिकार हो गया है। शेष दिल्ली के तमाम इलाकों में भूजल को खतरनाक बीमारियों का स्त्रोत मानते हुए सरकार ने ही यहां के हैंडपम्पों को लाल रंग से पोत कर उपयोग के लिए प्रतिबंधित करार दिया है। अब पानी की आपूर्ति के घंटे सीमित कर दिए गए हैं। जब पानी आता है, धकाधक बूस्टर पम्प घनघनाने लगते हैं। सारी गंदगी खिंचकर पानी में समा जाती है। दिल्ली बीमार पानी पीने को अभिशप्त है। अब पानी महंगा हो रहा है। जो क्रेन मंगा कर पानी पी रहे हैं उन्हें तो कोई चिंता नहीं , बाकी का क्या करें? बीमार पानी के बीमारों का इलाज कैसे हो ?

दिल्ली सरकार शासकीय बयानों की लुकाछिपी के बीच दिल्ली में पानी के निजीकरण की तैयारी में जुटी है। बवाल कम हो, अत: निजी हाथों में सौंपने से पहले पानी की कीमतें बढ़ा रही है। फिर भी पानी तो निकल ही रहा है। धरती अंदर से सूखकर चटक ही रही है। कोई भी भूकंप का झटका इसे हिला देगा। इसकी कोई चिंता नहीं। सरकार ने आपदा प्रबंधन डिपार्टमेंट बना दिया है। सब कुछ करेंगे, लेकिन अपना पानी बचाने की कोशिश नहीं करेंगे। यह बढ़ोतरी अभी और होगी। आखिर कुछ भी हो, पैसा तो जनता की जेब से ही निकलना है। आप जानते होंगे, दिल्ली में करोड़ों खर्च कर सोनिया विहार जल शोधन संयंत्र लगाया गया है। संयंत्र तैयार है, लेकिन हाल ही में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री ने कहा कि अभी गंगा के पास इतना पानी नहीं है कि वह दिल्ली को दे सके। संयंत्र को पानी भले ही न मिले, लेकिन विदेशी कंपनी को इसके रखरखाव को ठेका दिया गया है, उसे तो मुफ्त में लाखों देने ही पड़ रहे हैं। पानी के बिलों में 'सर्विस चार्ज' के नाम पर बढ़ोतरी हो चुकी। यह निजीकरण की पहली मार है। एक दिसम्बर, 2005 से अगली मार पड़ेगी। जब पानी के बिल में सीवेज रखरखाव के नाम पर जल खपत राशि का 50% अतिरिक्त पैसा जुड़कर आएगा। निजी कंपनियों को उनकी शर्तों पर सब कुछ पका-पकाया मिलेगा। ''जोर का झटका धीरे से लगे'' इसी की तैयारी है।

दुर्भाग्य है कि हमारी चुनी हुई सरकारें अंतर्राष्ट्रीय ताकतों के हाथों खेल रही हैं। यहां

निजीकरण का खेल खतरनाक है। इसकी चर्चा हम अगले पन्नों पर करेंगे। जल बिरादरी की राय है कि यह झूठा खेल दिल्ली को उजाड़ देगा; जैसे पहले प्रदूषण के नाम पर फैक्टरियां उजड़ीं। ज्यादा से ज्यादा पानी खरीदकर ज्यादा से ज्यादा पानी बर्बाद करने की क्षमता हासिल कर लेना दिल्ली के संकट का समाधान नहीं, दिल्ली को अपना पानी हासिल करना ही होगा। कोई भी सरकार अपने बूते सभी को पानी पिलाने का दंभ न पाले। दिल्ली जल बिरादरी अभी पूरी तरह निष्क्रिय है। उसे सक्रिय होना होगा। दिल्ली के पास राष्ट्रीय मीडिया की बड़ी ताकत है। उसका इस्तेमाल हो। लगातार संवाद व ज़मीनी काम रास्ता बनायेंगे। दिल्ली जल बिरादरी उसी में लगे।

राजस्थान

यूं तो पूरे भारतवर्ष की संस्कृति ही पंच महाभूतों की संस्कृति है, लेकिन राजस्थान में आज भी पानी देव है और पानी के स्थान-तीर्थ। देश में सबसे कम पानी वाला स्थान जैसलमेर राजस्थान में ही है; फिर भी राजस्थान ही पानी का तीर्थ है। राजस्थान में पानी भले ही कम बरसता हो, लेकिन पानी का ज्ञान यहां इतना गहरा है कि उसने सूखी नदियों को भी पुनर्जीवित किया है।

बीकानेर का भूगोल पहाड़ी नहीं है। बावजूद इसके यहां रेत के टीबों के बीच भी 69 तालाब हैं। इसमें से मात्र पांच ऐसे हैं, जिन्हें राजा-रानी ने बनाया; बाकी 64 तालाब समाज के ही बनाए हुए हैं। राजस्थान में सतही जल कम रहा है। संभवत: इसीलिए यहां भूजल और वर्षा के जल से जीवन चलाने की समझ काफी गहरी रही है। टांके, तालाब, कुंडी, कुएं, खेत तलाई समेत सैंकड़ों विविध संरचनाएं जल सहेजने का ज्ञान दर्शाती है। जोधपुर कभी झीलों का शहर कहा जाता था तो इस ज्ञान के बूते ही। जैसलमेर कभी अरब देशों से व्यापार का केंद्र था, और सरिस्का में समृद्धि थी तो जाहिर है कि समाज ने अपना पानी संजोकर रखा होगा।

हमारी सरकार ने इंदिरा गांधी नहर बनाई। कहा कि इससे राजस्थान में पानी की समस्या का हल हो जाएगा। श्रीगंगानगर समेत कुछ इलाकों में इससे थोड़ी-बहुत हरियाली आई, लेकिन बीकानेर में आज मात्र दो बड़े तालाब ही चालू हालत में बचे हैं। नहर किनारे का लंबा इलाका खारेपन का शिकार हो गया है। राजस्थान के जिन इलाकों में समाज ने अपनी

समझ और साझेदारी से पानी-जंगल का काम किया है वहाँ लगातार तीन साल के अकाल के बावजूद दुष्प्रभाव नहीं दिखे। दूसरे इलाकों में पानी के अलग-अलग तरह से संकट अवश्य खड़े हो रहे हैं।

आज राजस्थान के 236 भागों में से मात्र 84 के पास ही कुछ अतिरिक्त जल है, जबकि 16 प्रतिशत हिस्सा अभी भी डार्क जोन के अंधेरे में है। दिलचस्प तथ्य है कि एक ओर तो परम्परागत जल संरक्षण का अहसास जगाकर यह प्रदेश पानी की कमी के संकट से धीरे-धीरे उबरने की कोशिश कर रहा है, दूसरी तरफ सबसे गहरे तल से भी पानी खींचकर पी लेने के नए कारोबार से गुणवत्ता व मात्रा का कष्ट बढ़ा है। कम्पनियां 800-900 फुट गहरे से पानी निकाल रही हैं। पानी में फ्लोराइड और नाइट्रेट के आंकड़े तेजी से बढ़ रहे हैं। टोंक, अजमेर, बीकानेर, झुन्झुनूं आदि में फ्लोराइड बढ़ रहा है। दूसरे राज्यों से राजस्थान में पलायन कर रहे उद्योगों ने भी इस आंकड़े को 25% तक बढ़ाया है और राज्य सरकार है कि केन्द्र सरकार द्वारा 1987 में बनाये भूजल अधिनियम को लागू करने की इच्छा-शक्ति अभी भी हासिल नहीं कर सकी है। सतही जल में बढ़ता प्रदूषण भी कम नहीं है। एक सर्वेक्षण के मुताबिक राजस्थान में 50 प्रतिशत सतही जल यमुना लिंक नहर, हरियाणा और चम्बल से आता है। सर्वेक्षण बताता है कि 60 प्रतिशत बीमारियां ऐसे पानी में मौजूद ई. कोली की वजह से ही रही हैं।

गांव के साथ शहरों में भी वर्षा जल का संचयन ही फ्लोराइड और नाइट्रेट के दुष्प्रभावों में कमी ला सकता है। पानी सहेजना और फिर भूजल स्तर को बनाकर रखने के लिए जल उपयोग में संयम का पाठ अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। अलवर क्षेत्र में कभी सूखी रही मौसमी नदी-अरवरी के बारहमासी बनने की कहानी जहां नदी-जोड़ का विकल्प है, वहीं अरवरी संसद ''संयम से संरक्षण'' के सिद्धान्त का जीता-जागता उदाहरण है। गांवों के साथ-साथ राजस्थान के शहरों को भी संयम का पाठ सीखना होगा। राजस्थान का लगभग 83% पानी खेती-सिंचाई में ही जा रहा है। एक तरफ सीकर में रेत के बड़े-बड़े टीबों पर अधिक से अधिक खेती का लालच बढ़ा है। दूसरी तरफ राजस्थान के शहरों में आबादी भी बढ़ रही है, और पानी की बर्बादी भी। राजस्थान के छोटे किसान को भी 100 से 500 रु. पानी पर खर्च करने पड़ रहे हैं। सुनिश्चित करना होगा कि कम से कम राजस्थान के पानीदार समाज को फिर कभी पानी के लिए गोलियां न खानी पड़ें। बीसलपुर के बांध से

टोंक के किसानों का पानी छीन कर अजमेर व जयपुर शहर को पानी पिलाने की जिद् के कारण गरीब किसान मारा गया। सरकार हत्यारी बनी।

ऐसी स्थिति सरकारी भेदभाव के कारण उपजती है। पानी के वितरण में असमानता इसकी वजह है। सरकार शहरों में 140 लीटर पानी प्रति व्यक्ति मुहैया कराने की व्यवस्था कर रही है, जबकि गांव में यह सीमा 70 लीटर प्रति व्यक्ति है। यह जायज नहीं है। राजस्थान में पानी के लिए बने आयोग की व्यास कमेटी रिपोर्ट में भी इसे जायज नहीं ठहराया गया। रिपोर्ट ने शहरों को प्रति व्यक्ति 120 लीटर और गांवों को 170 लीटर प्रति व्यक्ति का मापदण्ड उचित बताया है। रिपोर्ट मानती है कि विदेशी सहायता से समस्या का हल नहीं होगा। राजस्थान के पानी की समस्या का हल इसके समाज व सरकार के साझे से छोटे-छोटे कामों के जरिए हो सकता है, पर सरकार को तो यूरोपियन कमीशन के 450 करोड़ का गौरव है। सरकार कह रही है कि वह यूरोपियन कमीशन और गांव के साथ मिलकर काम करेगी। वह विदेशी नीयत को समझने में भूल कर रही है।

रिपोर्ट ने कुओं और नालों के पानी की गुणवत्ता में गिरावट के लिए उद्योगों के कचरे को जिम्मेदार तो माना है, लेकिन इसकी एवज में प्रदूषित जल के प्रभावितों को मुआवजा देने की राय दी है। यह तो वही हुआ, जो राष्ट्रीय जल नीति कहती है - "प्रदूषण करो और जुर्माना भरो।" प्रदूषित जल लोगों की जान ले रहा है। आखिर किसी की जान लेने वाले को मात्र मुआवजा लेकर कैसे छोड़ा जा सकता है। इसके लिए फौजदारी अदालतों में मुकदमा चलाने का प्रावधान होना चाहिए।

राजस्थान में जल बिरादरी लम्बे समय से कोशिश कर रही है कि सरकार जल साक्षरता के लिए प्रदेशव्यापी अभियान चलाए.... ऐसा अभियान जो सरकारी योजना-जल परियोजना को पारदर्शिता के साथ समाज से जोड़ सके । वर्ना अभी तक तो सरकारी योजनाएं पानी के प्रति समाज की आत्मीयता तोड़ने वाली ही साबित होती रही हैं। सम्मेलन में खुद उपस्थित होकर व्यास कमेटी के अध्यक्ष श्री विजयशंकर व्यास ने इस बात पर चिंता व्यक्त की कि ऐसी रिपोर्ट पर सबसे पहले गांवों की राय लेनी जरूरी होती है; लेकिन राय लेना तो दूर, सम्मेलन की तारीखों तक यह रिपोर्ट गांवों तक नहीं पहुंची है।

राजस्थान जल बिरादरी की चिंता थोड़ी भिन्न है। वह कहती है कि एक ओर तो लोग अपनी

छोटी सी आमदनी और ढेर सारी मेहनत से धरती का पेट भरने के लिए तालाब आदि बना रहे हैं। हम उन्हें कह रहे हैं कि वे संयमित खेती करें। ऐसी खेती बोयें, जो जीवन तो चलाती हो, लेकिन जीवन के लालच को बढ़ाती न हो; दूसरी ओर कम्पनियाँ दिन-रात पानी खींच रही हैं। ये विषमता कैसे रुके ? नदी अरवरी के 70 गांवों की अरवरी संसद ने एकमत से संकल्प लिया है कि वे अपनी इक इंच जमीन बाहरी व्यक्ति को नहीं बेचेंगे। पानी के अनुशासित उपयोग का ही परिणाम है कि यहां के कुओं में चार फुट पर भी पानी देखा जा सकता है। सांवत्सर की वर्षों पुरानी सूखी बावड़ी में लबालब पानी है। यहां के काम से प्रेरित होकर शेखावाटी के रामगढ़ में बहन अमला रुइया ने पानी के काम में खुद लगकर करोड़ों खर्च किए हैं। इसका प्रभाव वहां दिखने लगा है। उद्योगपति श्री रघुहरि डालमिया जी भी चिड़ावा में पानी का देसी काम करने का मन बना चुके हैं। जोधपुर महाराजा गजसिंह ने भी आम जन को जोड़कर पानी का काम शुरू किया है। तमाम छोटी-बड़ी संस्थाएं इस काम में लगी हैं।

राजस्थान जल बिरादरी की यह प्रेरक भूमिका तो ठीक है, लेकिन 'पानी की मांग' कम करने की दिशा में बिरादरी को अधिक सक्रियता और समझदारी से काम करने की जरूरत है। तालाबों के पानी से नारू रोग के भ्रम को भी दूर करना होगा। अस्वच्छ बावड़ियों में जाने से यह रोग होता है। ऐसी बावड़ियों की पहचान कर इनकी सफाई का बीड़ा भी किसी को अपने सिर पर बांधना होगा, अन्यथा और दूसरे ढेरों भ्रम खड़े कर मार्केटिंग करने वाली कंपनियां हमें पानी के बाजार पर निर्भर बना देंगी। राजस्थान को चाहिए कि संकट से सीखे और पानी के ज्ञान को लेकर देश के विभिन्न इलाकों में नए बनते 'डार्क जोन' में जाए। उन्हे सीख दे।

गुजरात

गुजरात गांधी जी का प्रदेश है, किन्तु गांधी के इस प्रदेश में प्रकृति, प्रेम, अहिंसा और सद्भाव की जगह समाज, सम्प्रदाय और पानी का व्यापारीकरण हावी है। प्राकृतिक तौर पर पानी की कमी के मामले में गुजरात राजस्थान का छोटा भाई है। गुंजरात में कच्छ-सौराष्ट्र पानी के संकट वाले बड़े इलाके हैं, लेकिन छोटे भाई ने बड़े भाई से ज्यादा नहीं सीखा। गुजरात में अकाल राहत के नाम पर पानी के कई काम दिखाई देते हैं, लेकिन इन कामों में पैसे का दुरुपयोग अधिक है। माथुर भाई सवानी सरीखे हीरे के व्यापारियों ने भी पानी के काम

किए हैं, लेकिन गुजरात का समाज अभी राजस्थान की भांति जागृत नहीं है। खेती में खूब पानी, खूब उर्वरक और खूब कमाई का ही लालच दिखाई देता है। व्यापारीकरण का भूत यहां निजीकरण के खतरे को बढ़ाएगा। ऐसा स्पष्ट है। देश के जिन राज्यों ने सबसे पहले 'संविदा खेती' यानी 'ठेके पर खेती' की शुरुआत की, उनमें गुजरात प्रमुख है। अजीब समझ है। एक ओर पानी की इतनी कमी है कि सौराष्ट्र का बड़ा हिस्सा जलापूर्ति के लिए टैंकरों पर निर्भर है, कुओं में जो कुछ पानी बचा है, वह पर्याप्त नहीं है। दूसरी ओर सरकार पर संविदा खेती का भूत सवार है। हालांकि अब जब पानी की कमी ने व्यापार पर असर डालना शुरू कर दिया है, तो थोड़ी-बहुत नींद टूटी है। इन्हें काम समेटना पड़ा है। कई स्वयंसेवी संस्थाएं जगी हैं।

गुजरात जल बिरादरी के प्रेम जी भाई पीने के पानी को समझकर समाज को जोड़ने में लगे हैं। काठियावाड़ और आसपास भूजल रिचार्ज के ऐसे काम चल रहे हैं। परंपरागत भूजल रिचार्ज के खेत तलाई जैसे काम चल रहे हैं। खेत तलाई की परंपरागत तकनीक यहां सफल है। इससे खारापन रोकने में भी मदद मिल रही है। वन प्रबन्धन का काम भी इसमें मदद कर रहा है। इससे दिन-रात का रोजगार खड़ा हो रहा है। सौराष्ट्र में खेतों के लिए रात को बिजली मिलती है। किसान रात-दिन जगता है। गुजरात को देखकर समझ सकते हैं कि प्रकृति विरुद्ध हो जाए तो कैसे वह तमाम धन, समय और जीवन को लील लेती है। अकेला पानी ही सब की प्राथमिकताएं बदलने को काफी है।

श्री राजेन्द्र सिंह के नेतृत्व में हुई जलयात्रा में पानी को लेकर कई संकल्प हुए थे। विश्वविद्यालय के शिक्षकों एवं छात्रों ने भी राष्ट्रीय संचय योजना के अंतर्गत तालाबों के निर्माण व मरम्मत के काम शुरू किए थे। छतों का पानी रोकने का कुछ काम शुरू करने का प्रण लिया था। बोतलबंद पानी नहीं पीने का संकल्प तो हजारों ने लिया।

गुजरात में बोरवैल, ट्यूब वैल, कुएं आदि धरती निकासी के माध्यमों को लेकर लाइसेंस व्यवस्था का प्रावधान सुनने में आया है। जल बिरादरी महसूस करती है कि यह ठीक नहीं है। इससे जल स्तर में गिरावट तो नहीं रुकेगी, भ्रष्टाचार का एक और माध्यम अवश्य बन जाएगा। जल स्तर पर स्थानीय समुदाय की राय से एक निश्चित भूजल स्तर तय होना चाहिए। उस स्तर से नीचे पानी निकासी पूरी तरह प्रतिबंधित होनी चाहिए। ऐसा करने से

पानी के उपयोग में संयम और जल पुनर्भरण पर जोर स्वतः हो जाएगा। गुजरात को इस पर जोर देना होगा। सरकार कुछ करे न करे, समाज को अपने स्तर पर भूजल स्तर सीमा का निर्धारण करना ही होगा। वर्ना एक ओर जल और दूषित होगा, लोग प्यास से मरेंगे और दूसरी ओर 'विकसित गुजरात' का नारा....सिर्फ नारा बनकर ही रह जायेगा। मुख्यमंत्री जी को 'सर्वश्रेष्ठ मुख्यमंत्री' के तमगे मिलते रहेंगे और पानी निकासी पाताल तक पहुँच जाएगी। ध्यान रहे कि एक जमाने में आन्ध्रप्रदेश के मुख्यमंत्री चन्द्रबाबू नायडू को भी सर्वश्रेष्ठ मुख्यमंत्री घोषित किया गया था और बाद में वहां पानी की कमी और कर्ज ने लोगों की जान ली। गुजरात के समाज को आगे आना ही होगा। अभी गुजराती व्यापारी मिसाल है; किसानों को पानी के 'गजधर' बनकर मिसाल कायम करनी होगी।

मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश एक ऐसा प्रदेश है, जहां अखबार और सरकार से लेकर समाज संस्थान तक... सभी में पानी की चर्चा बहुत है, लेकिन तद्नुरूप जमीनी काम कम है। मालवा, निमाड़, मध्य क्षेत्र, बुन्देलखण्ड, बघेलखण्ड और मदा... सब जगह सूखा और वीरानगी बढ़ रही है। समझ में नहीं आता कि तालाबों-झीलों के मामले में अतीत का अत्यन्त समृद्ध यह प्रदेश कागज का शेर क्यों साबित हो रहा है। श्री ज्योतिरादित्य सरीखे युवा राजनेता... कुछ संस्थाएं आगे आए हैं, लेकिन मालूम नहीं क्यों... मध्य प्रदेश का समाज आगे नहीं आ रहा; जबकि नदी जोड़ और निजीकरण का सबसे बड़ा संकट मध्य प्रदेश के सिर पर खड़ा है। वर्षा का आंकड़ा गिर रहा है। झाबुआ में ही बारिश 85 इंच से कम होकर 30 इंच पर पहुंच गई है। आदिवासी इलाकों में फ्लोराइड का दंश बढ़ रहा है। जितना बरसे, उसे संजोना जरूरी है। यहां भोपाल में 265 करोड़ रुपये लगाकर सड़क तो बनीं, लेकिन तालाब नहीं बने। मध्य प्रदेश के प्रसिद्ध अखबार दैनिक भास्कर अपनी "जल सत्याग्रह" नामक पहल तथा पानी की अच्छी कवरेज के लिए चर्चा में रहता है, बावजूद इसके मध्य प्रदेश भी जाने क्यूं हर आंगन तक पहुंचने वाली पगडंडी का रास्ता छोड़कर हाइवे पर दौड़ना चाहता है। अच्छा होगा यदि समाज एकजुट होकर आगे आये।

मध्य प्रदेश में प्राकृतिक तौर पर छोटी-छोटी संरचनाओं से जल संग्रह से जल समृद्धि की

बड़ी क्षमता है। लेकिन सरकार है कि कर्ज और बड़े बजट की बड़ी आकार वाली परियोजनाओं के चंगुल में जानबूझकर फंसती जा रही है। म.प्र. जल बिरादरी की लगातार कोशिशों के बावजूद यदि म.प्र. की जलनीति में कई कमियां बरकरार हों, तो इसे क्या कहा जाए। विश्व बैंक के रास्ते पर चलकर 1800 करोड़ रुपया पानी पर खर्च हो गया। जल बिरादरी लगातार कह रही है कि विश्व बैंक के रास्ते पर चलना बंद करें। इससे पानी की कीमतें बढ़ेंगी। पानी पहले समाज और फिर एक दिन सरकार के हाथ से भी निकल जाएगा। पानी के लिए पैसा सीधे ग्राम समाज को देने की मांग हो रही है। सरकार को बराबर चिट्ठियाँ भेजी गईं, लेकिन सरकार आँख मूंदे पड़ी है। सरकार ने कोई जवाब नहीं दिया।

'केन-बेतवा लिंक' के रूप में म.प्र. और उत्तर-प्रदेश सीमा पर स्थित बुंदेलखण्ड में नदी जोड़ हो रहा है। अध्ययन बताता है कि यह जोड़ बाढ़, सुखाड़, विस्थापन और प्राकृतिक आपदा को बढ़ाने वाला तथा प्राकृतिक विरासत को नष्ट करने वाला होगा। प्रधानमंत्री जी ने केन-बेतवा जोड़ का उद्घाटन कर दिया है। ताज्जुब है। अभी जोड़ संबंधी अध्ययन आधा-अधूरा ही है, लेकिन उद्घाटन कर दिया गया। लागत का आकलन भी ऊपरी तौर पर ही किया गया लगता है। पर्यावरणीय और विस्थापन संबंधी लागत को इसमें नहीं जोड़ा गया है। आकलन-अध्ययन की बात छोड़ भी दें, तो भी जल बिरादरी सैद्धान्तिक तौर पर इस परियोजना से सहमत नहीं है। इसके पीछे ठोस वैज्ञानिक, आर्थिक व सामाजिक कारण हैं। बुंदेलखण्ड जल बिरादरी इन्हें समझकर लोगों को समझाने में लगी है। नर्मदासागर और तवा बांध से हुए विस्थापन, विनाश और दलदल को झेल रहे लोग इसे समझने भी लगे हैं। यूं भी ऊपर केन पर बने बांध से पानी छोड़ने के बाद जिन 200 मोहल्लों को बाढ़ झेलनी पड़ी थी और अब पानी की कमी के कारण बोआई नहीं हो सकी, वे सभी समझ ही गए हैं कि केन का पानी बेतवा में जाने से आगे क्या होने वाला है। इस बाढ़ में तालाबों में भरी गाद ने भी मदद की। इस लिंक की सबसे बुरी बात यह है कि इसका उपलब्ध सरकारी अध्ययन झूठ पर आधारित है। जोड़ की जरूरत पर चर्चा करते वक्त इस इलाके में उपलब्ध भूजल भंडारण व उपयोग की अकूत संभावनाओं की भी सरासर उपेक्षा की गई। हालांकि बुंदेलखण्ड के इस इलाके की जन-जल जरूरतों को पूरा करने के लिए वही बेहतर विकल्प है। आप जानते होंगे कि बुंदेलखण्ड इलाके के तालाबों से प्रेरित होकर ही देश में तालाबों का समृद्ध साहित्य रचा गया। बावजूद इसके यदि ये इतने अच्छे थे, तो नष्ट क्यों हुए ? ...इन्हें सरकार के बेसमझी भरे प्रचार ने भी नष्ट किया। ताज्जुब होता है कि बांदा के एक छोटे से गांव में 73 हैण्डपम्प

लगे। डाक्टर ने भी कहा – "हैण्डपम्प का पानी पिओ। तालाब के पानी से नारु और पीलिया रोग होता है। अपने आसपास पानी न भरने दें। उससे मलेरिया होता है।" इस दुष्प्रचार ने लोगों का विश्वास तोड़ा। समाज को ऐसे दुष्प्रचार को उबारने की जरूरत है।

उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश जल बिरादरी मिलकर इस काम में लगे हैं, लेकिन उन्हें और ताकत देने की जरूरत है। यह लड़ाई जनशक्ति व प्रमाणिक तर्कों के जरिए ही लड़ी जा सकती है। बुंदेलखण्ड पूरे देश में नदी जोड़ के खतरों पर लगाम लगाने वाला साबित हो सकता है। बुंदेलखण्ड का इलाका रानी लक्ष्मीबाई जैसी वीरागंना का इलाका है। बुंदेलखण्ड के लोग पानी की लड़ाई लड़ने को तैयार हैं। आवश्यकता है तो सिर्फ यह कि ये सरकारी दुष्प्रचार के भ्रम में न फंसने पायें। दूसरे अन्य संकट के समाधान खोजने के साथ-साथ यहां अधिक पानी पीने वाली फसलों के प्रति बढ़ते लालच पर भी लगाम लगानी होगी। आई.टी.सी. कंपनी को सोयाबीन की खेती के लिए जमीन दी गई है। मालवा के रतलाम आदि इलाके में लहसुन जैसी ज्यादा पानी पीने वाली खेती बड़े पैमाने पर होती है। समाज ऐसे घटनाक्रम के प्रति जागरूक हो। यहां फसल-चक्र में बदलाव जरूरी है। अत: प्राथमिकता के तौर पर मध्य प्रदेश जल बिरादरी को अपने संगठन व शक्ति बढ़ाने की जरूरत है। जमीनी स्तर पर रचना और संवाद करने से यह ताकत अपने आप बढ़ेगी।

छत्तीसगढ़

छत्तीसगढ़ का चरित्र मध्य प्रदेश से बहुत भिन्न नहीं है। परंपरागत तौर पर यहां भी जल सहेजने की संस्कृति कभी काफी समृद्ध रही है, और अब छत्तीसगढ़ के तालाब भी अतिक्रमण और गाद के कारण बर्बाद हो गए हैं। यह बात और है कि इन तालाबों की पाल पर बने मंदिर अभी तक बरकरार हैं। इस राज्य पर भी बहुराष्ट्रीय कंपनियों की पूरी नजर है।

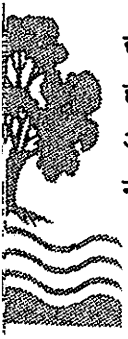

छत्तीसगढ़ ऐसा सबसे पहला राज्य है, जिसने अपनी एक नदी को एक प्राइवेट कंपनी के हाथों बेचा था। यह तो भला हो राज्य सरकार का, जिसने जल बिरादरी के विरोध, धरना-अनुरोध का ख्याल कर शिवनाथ नदी पर रेडियस कंपनी का पट्टा रद्द कर दिया। छत्तीसगढ़ में नदियों पर अतिक्रमण के संघर्ष में सत्यभाभा नामक बहन की शहादत व्यर्थ नहीं जाएगी।

ऐसी उम्मीद जगी है। इधर छत्तीसगढ़ में नदी-नालों की जल संपदा के संतुलित और समुचित उपभोग के लिए राज्य सरकार ने सम्मेलन के दिन... 11 नवम्बर, 2005 को ही एनीकटों की लंबी शृंखला तैयार करने की घोषणा की। योजना है कि अगले सात साल में राज्य की नदियों और बरसाती नालों पर 1657 करोड़, 26 लाख रुपये की लागत से 595 एनीकटों का निर्माण हो। इसमें से 295 एनीकट हसदेव कछार, 157 एनीकट महानदी-गोदावरी के कछार तथा 143 एनीकट महानदी परियोजना क्षेत्र में बनेंगे।

यह सुनकर अच्छा ही लगा कि यहां के मुख्यमंत्री ने बड़े-बड़े बांधों को अव्यावहारिक, असुविधाजनक, खर्चीला और जटिल प्रक्रिया वाला बताते हुए ठीक नहीं माना। और अच्छा लगता यदि छत्तीसगढ़ जल बिरादरी राज्य सरकार/प्रशासन को तालाब सरीखी ऐसी परम्परागत जल संरचनाओं के लिए विकेन्द्रीकृत जल प्रबंधन के बड़े लक्ष्य हेतु प्रेरित कर पाती।

हालांकि इस सम्मेलन में छत्तीसगढ़ जल बिरादरी का समुचित प्रतिनिधित्व नहीं था, लेकिन छत्तीसगढ़ जल बिरादरी ने शिवनाथ नदी मुक्ति का बड़ा काम किया है। अब उद्योगों के प्रदूषण पर लगाम लगाने के साथ-साथ उन्हें भूजल पुनर्भरण के लिए आगे लाने का काम भी बड़ी चुनौती है। दरअसल जहां-जहां आदिवासी आबादी है, प्राकृतिक समृद्धि है ... उन-उन इलाकों पर व्यावसायिकों की गिद्ध निगाहें लगी हुई हैं। हम यह नहीं कहते कि उद्योग न हों..., उद्योग हों, लेकिन वे मानव, प्रकृति और हमारी संस्कृति के प्रति जवाबदेह बनें। फायदा कमायें, लेकिन कायदा न भूलें।

पूरे देश में अलग-अलग स्तर व क्षेत्र में कार्यरत जल बिरादरी इकाइयों को चाहिए कि वे इस खतरे को पहचानें और किसी भी इलाके में प्रस्तावित उद्योगों की पूर्व जानकारी रखें। सभी सुनिश्चित करें कि ये उद्योग जल की मात्रा और गुणवत्ता में गिरावट का अपराध न करें। छत्तीसगढ़ में 'देशमुख' सरीखे समाचार पत्र जल संरक्षण में सहयोगी हैं। उम्मीद है कि छत्तीसगढ़ जल बिरादरी जल सम्मेलन में जारी ''भीकमपुरा जल घोषणा पत्र'' की पालना सुनिश्चित करेगी, परंपरागत स्रोतों के पुनरुद्धार और समाज की छोटे-छोटे पाल बनाने के बड़े काम का बीड़ा उठाएगी।

उत्तरप्रदेश

वर्तमान उत्तर प्रदेश वह प्रदेश है, जिसने देश को साहित्य, सत्ता, समाज, अध्यात्म और विज्ञान की कई बड़ी हस्तियाँ दी हैं। आगरा-इलाहाबाद-वाराणसी और कानपुर सरीखे विश्वविद्यालय कभी बड़े आंदोलनों की फैक्टरी रहे हैं। मेरठ की चिंगारी सर्वविदित है। जलतीर्थ होने के कारण बनारस और संगम (प्रयाग) का सदा ही आध्यात्मिक महत्व रहा है। हर वर्ष संगम लाखों को न्यौता देता है। अजीब बात है कि संगम में डुबकी लगाने का बुलावा सभी स्वीकारते हैं, लेकिन गंगा को पहले जैसी पवित्र और धवल बनाने की चुनौती स्वीकारता कोई नहीं दिखता; न उ.प्र. की सरकार और न समाज। बहुत कम लोग जानते होंगे कि अंग्रेजों ने जब पहली बार पानी में टैक्स देखा, तो उत्तर प्रदेश ही इसकी पहली प्रयोगशाला बना। अकाल के बाद राहत के लिए नहर बनाने का सपना यहीं से देखा गया। नहरें टैक्स देती हैं, तालाब नहीं। अत: अंग्रेजों ने अकाल राहत का रास्ता तालाबों को न मानकर नहरों को माना। इसके लिए छोटी सी आबादी वाले रुड़की में पहला सिविल इजीनियरिंग का कॉलेज खुला और फिर यहीं से फैली पूरे देश में पानी से टैक्स वसूलने की इंजीनियरिंग संरचनाएँ। वर्ना अकाल से निपटना तो भारत का समाज पहले भी जानता था। आज ये नहरें समस्या बनती जा रही हैं।

उत्तर प्रदेश में पानी की समस्या के मुख्य स्रोत तीन ही हैं- नहरें, उद्योग और खेती की बेसमझी। इनकी वजह से दलदल और भूजल में गिरावट का संकट समानान्तर तेजी से बढ़ रहा है। तेजी से नए डार्कजोन बन रहे हैं। सतही और भूजल... दोनों में प्रदूषण का बड़ा संकट भी इस प्रदेश की गर्दन दबोचे हुए है। गंगा सरीखी नदी का कष्ट नरोरा, कानपुर, इलाहाबाद, वाराणसी सभी जगह भयानक दिखता है। हमारी फैक्टरियों ने कई इलाकों में लोगों का जीना मुहाल कर रखा है। इस प्रदेश में फैक्टरियों को कचरा निपटान की कोई चिंता नहीं है।

उ.प्र. जल बिरादरी के जिम्मे ''केन-बेतवा नदी जोड़'' संबंधी अभियान को गति देने का काम तो है ही, प्रदूषण और पानी की मांग कम करने के मोर्चे भी हैं। फिलहाल उ.प्र. जल बिरादरी केन-बेतवा लिंक तथा हिंडन नदी प्रदूषण को लेकर जागृति कार्यक्रमों में लगी है। हिंडन उत्तर प्रदेश की सर्वाधिक प्रदूषित नदी है। सहारनपुर से चलकर मुजफ्फरनगर, मेरठ,

बागपत, गाज़ियाबाद होती हुई गौतम बुद्ध नगर के गांव मोम्नाथल में यमुना से मिलती है। क्षेत्र में गन्ने का लालच खासतौर पर इसके लिए जिम्मेदार है। एक तरफ गन्ना खेती धड़ाधड़ धरती का पानी सोख रही है; उर्वरक भूजल प्रदूषित कर रहे हैं; नदी में पानी की निरंतर कमी हो रही है तो दूसरी ओर गन्ना मिलों, शराब व अन्य फैक्टरियों तथा सीवेज का कचरा मिलकर हिंडन को इस कदर प्रदूषित कर रहा है कि हिंडन के पानी का स्पर्श पाकर शरीर घातक रोग का शिकार बन रहा है।

यह हास्यास्पद स्थिति है। ताजे गुड़ की मीठी महक वाले इलाके चीनी के चक्कर में बर्बाद हो रहे हैं और सरकार चीनी मिल खोलने का रिकार्ड बनाने में लगी है। जल बिरादरी की हिंडन इकाई की पदयात्राओं और लगातार संवाद का परिणाम यह हुआ है कि गांवों को धीरे-धीरे खतरे का अहसास होने लगा है। उ.प्र. जल निगम, गाजियाबाद विकास प्राधिकरण, उ.प्र. औद्योगिक विकास निगम और राष्ट्रीय नदी संरक्षण निदेशालय ने मिलकर हिंडन में उद्योग व सीवेज का कचरा रोकने का 100 करोड़ का प्रस्ताव तैयार किया है। स्कूल-कॉलेज, स्वयंसेवी संगठन, किसान और गांव धीरे-धीरे लामबंद होने लगे हैं। उम्मीद है कि जलबिरादरी का हिंडन प्रदूषण मुक्ति अभियान अगले कुछ वर्षों में प्रभावी भूमिका निभाएगा।

प्रस्तावित केन-बेतवा जोड़ एक ऐसा मुद्दा है, जो तात्कालिक ध्यान और संगठन की मांग करता है। यदि इस पहले जोड़ को प्रभावित करने का निश्चय करें, तो पूरी नदी जोड़ परियोजना पर इसके दूरगामी परिणाम होंगे। अत: उत्तर प्रदेश जल बिरादरी को अति महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने के लिए तैयार रहना चाहिए। समाज की ताकत से ही ये भूमिका अदा की जा सकेगी और मुद्दे के प्रति पूरी समझ बनाये बगैर समाज का संगठन नहीं बन सकेगा। अत: उत्तर प्रदेश जल बिरादरी को इस दिशा में तत्काल कदम उठाने की जरूरत है। बिरादरी इस जोड़ के प्रमाणिक वैज्ञानिक अध्ययन की भी तैयारी करे, ताकि इसे न्यायालय में चुनौती दी जा सके। टिहरी बांध के सम्भावित दुष्प्रभावितों का सर्वाधिक बड़ा आहार उत्तरांचल के बाद उत्तर प्रदेश ही बनेगा। अत: राज्य बिरादरी को चाहिए कि उत्तरांचल राज्य बिरादरी को इस मसले पर सहयोग करे। तालाबों का इलाका बुन्देलखण्ड तो पुन: तालाबों की मांग कर ही रहा है; साथ-साथ फर्रुखाबाद, हरदोई, उन्नाव, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़ समेत कई अन्य इलाकों में भी सूखे और दलदल का यही इलाज है। बंजर जमीनों

का फैलाव इस राज्य में एक बड़ी समस्या बनती जा रही है। जल बिरादरी को इस दिशा में भी कदम उठाने की आवश्यकता है।

उत्तरांचल

उत्तरांचल को देवभूमि कहा जाता है। नदी आधारित यमुनोत्री, गंगोत्री, पंच प्रयाग, ऋषिकेश, हरिद्वार, सरीखे पूज्य जलतीर्थ, तालों के लिए प्रसिद्ध नैनीताल जैसे पर्यटक स्थल, हिमालय सरीखी प्रहरी पर्वतमाला और राजा जी व कार्बेट नेशनल पार्क सरीखे आरक्षित वन क्षेत्र यहाँ हैं। कुदरत ने इस प्रदेश को यमुना, भागीरथी और अलकनंदा सरीखी जलधाराएं दी हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि भारत के एक बड़े भूगोल की प्राकृतिक समृद्धि का रिमोट उत्तरांचल के हाथ में है। इतना महत्वपूर्ण प्रदेश यदि खुद बेसमझी का शिकार हो जाए, तो बाकी का क्या होगा।

कभी एक समय था कि गंगा में हरिद्वार से ऊपर प्रदूषण नहीं था; सरकार के रिकार्ड में भी और असलियत में भी। 90 के दशक के बाद गंगोत्री के होटलों का झूठन और मल, उत्तरकाशी व श्रीनगर गढ़वाल का शहरी कचरा- सीवेज और ऋषिकेश के नाले, जंगल कटान, भूस्खलन आदि ने मिलकर ऊपर भी गंगा की दुर्गति कर दी। दुर्गति पहले हुई, सरकार बाद में चेती। आज उत्तरांचल के पानी पर कई संकट हैं। विश्व बैंक की 'स्वजल परियोजना' ने भी कई नए संकटों को जन्म दिया है। फिलहाल टिहरी बांध और आनन-फानन में मैसर्स स्वास्तिक पावर इंडिया लिमिटेड को लीज पर दी जा चुकी भिलंगना नदी से उपजी आशंकाओं का बवंडर ही उत्तरांचल पर मंडरा रहा है।

फलिण्डा में भिलंगना का पानी बिक गया है। हाइड्रो पावर के नाम से उस पर कब्जा करने वाली स्वास्तिक पावर इंडिया लिमिटेड की प्रमुख सहयोगी कंपनी (एकर इंटरनेशनल) अपने खराब रिकार्ड के चलते पहले ही काली सूची में दर्ज है। बावजूद इसके स्वास्तिक पावर इंडिया लिमिटेड को नदी बेची गई। नदी की बिक्री का विचार ही सैद्धान्तिक तौर पर गलत है। एक ख़राब रिकार्ड वाले हाथों को बेचना तो और भी संदेहास्पद है। इससे भ्रष्टाचार और नीयत में खोट का पता चलता है। इसे लेकर स्थानीय स्तर पर तनाव कम नहीं है। हालात गंभीर हैं। आंदोलनकारी और सरकार के बीच टकराव की स्थिति है। गिरफ्तारियों

का अंदेशा है, लेकिन उत्तरांचल जल बिरादरी के अगुवा श्री शमशेर सिंह बिष्ट एक मजबूत सेनापति हैं। उनकी जिंदगी ही आंदोलनों में बीत रही है। यहां बिरादरी अपना दायित्व निभाने में कभी पीछे नहीं हटेगी। ऐसा यकीन है।

अब जरा टिहरी के परिदृश्य को समझ लें। आज टिहरी बांध के बनने से टिहरी डूब रहा है। जैसे ही टिहरी को डुबोने का फैसला हुआ, पांच मिनट के भीतर लोगों में अफरा-तफरी मच गई। जिसके पास जीवन जीने के लिए जो था, उसी को सहेजने-समेटने में लग गया। टिहरी में जैसे-जैसे पानी उठ रहा है, मानवीय पक्ष डूब रहा है। उसी के बगल में भिलंगना नदी है। इससे अगल-बगल के धान के खेत भी डूब ही जायेंगे। पानी कोई चीता नहीं है कि एक बार आया, शिकार लिया और चला गया। टिहरी तो बार-बार झपट्टा मारेगा। इस तरह हम देख सकते हैं कि कैसे हमारी ही कीमत पर तथाकथित विकास लाया जा रहा है। यह पानी दिल्ली की उन अमीर कालोनियों को दिया जाएगा, जो अपने शौचालयों में हर बार फ्लश दबाकर 15 लीटर पानी बहा देते हैं। अंतत: यह पानी बर्बाद होगा। अभी टिहरी बांध का एक ही लक्ष्य है : बड़े उद्योगों को .....पूँजीपतियों को पानी मिलना चाहिए।

आज एक तरफ गंगा के ऊपरी भाग में पानी नहीं है, दूसरी तरफ उत्तराखण्ड का एक हिस्सा पानी में डूब रहा है। आप समझ सकते हैं कि यह क्या है?.... पानी है, फिर भी पानी का संकट है। आज उत्तराखण्ड में पानी को लेकर जो संकट वहां के लोग भुगत रहे हैं, वह कोई और न भुगते..... इसके लिए हमें आगे आना है। एक सितम्बर को आन्दोलन हुआ, लेकिन राजनीति बीच में आ गई। भा.ज.पा. और कांग्रेस आपस में लड़ रहे हैं। मंच पर दोनों अलग-अलग दिखते हैं लेकिन जनता के लिए दोनों का रवैया एक जैसा है। आम आदमी बहुत तकलीफ में है; क्योंकि विकास के नाम पर उसे ही सताया जा रहा है। जब टिहरी के गांव डूब जायेंगे, तब बताइए कि लोग कहां जायेंगे? आज सबसे बड़ा प्रश्न यही है। उत्तराखण्ड एक अलग राज्य बन गया है, बावजूद इसके उत्तराखण्ड की बुरी गत है। अपने मन्दिरों को बचाने के लिए महिलाओं को जेल जाना पड़ा। लाठियाँ खानी पड़ीं। क्या पानी के लिए लाठी खाना ही विकास है? आज हमारे पास हमारी चीज नहीं है। जो नीति बन रही है, उस पर गांव के गरीब का मालिकाना हक नहीं है। हम एक किलो वॉट बिजली भी नहीं पैदा कर पाएंगे और मालिकाना हक सरकार के हाथ में चला जाएगा। अभी उत्तराखण्ड में केवल 10 प्रतिशत भूमि ही खेती के योग्य है। शेष पर जंगल-नदी और सड़कें हैं। जंगल

और सड़कों पर पहले ही समाज का हस्तक्षेप बन्द हो गया है। अब नदियाँ भी हमारे हाथ से जाएंगी। हमें आन्दोलन करना होगा। तभी ये नदियाँ बचेंगी। उत्तराखण्ड में फिलहाल तो टिहरी ही सबसे बड़ी समस्या बन रहा है। अप्रैल 2006 तक टिहरी पूरी तरह डूब जाएगा। यह बांध अति-संवेदित भूकम्प क्षेत्र में आता है। जिस दिन भूकम्प आएगा, पूरे उत्तराखण्ड और उत्तर प्रदेश में तांडव मच जाएगा। हमें पूरी समझदारी से आगे बढ़ना है।

उत्तराखण्ड में पानी और परिवहन के नाम पर लगातार मजाक हो रहा है। स्वजल परियोजना का नाम बड़ा है, लेकिन उसके क्षेत्र में लगे 40 प्रतिशत ट्यूबवेल फेल हो गये हैं। ट्यूबवेल के लगने से एक बाल्टी की जगह 10 बाल्टी खर्च होने लगा था। पहाड़ों में बोर करने की बेसमझी से चट्टाने खिसकने का खतरा बढ़ गया है। नैनीताल-रुद्रप्रयाग ही नहीं, चट्टानें खिसकने के और भी नित नए केंद्र बन रहे हैं। यहां चीड़ जैसे पेड़ लगाये जा रहे हैं, जो ज्यादा पानी खींचते हैं। यदि इस अत्याचार के विरुद्ध लड़ाई लड़नी है तो हमें पानी के हर पहलू को समझना चाहिए। हम यह भी समझें कि नीति-निर्धारण में आम आदमी की कोई भूमिका हो, ऐसी कोशिश सरकार क्यों नहीं करती? दरअसल हमारी सरकार विश्व बैंक और दूसरे बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के दबाव में काम कर रही है। सरकार पर सिर्फ आंकड़ों का भूत सवार है। जमीन पर कुछ नहीं हो रहा। निजीकरण के नाम पर यह एक पूरी सभ्यता और संस्कृति को डुबोने की बात है। हम सभी को मिलकर इसे बचाने में लगना चाहिए।

बिहार

बात चाहे नीति की हो, राजनीति की या प्रकृति, प्रसिद्धि और परिवेश की.... बिहार अलग ही दिखता है। पानी के मामले में भी उत्तर,मध्य और दक्षिण बिहार अलग-अलग ही है। बाढ़ की जैसी त्रासदी साल-दर-साल बिहार झेलता है, वैसी कोई और प्रदेश नहीं झेलता। सही बात यह है कि यही इलाके बाढ़ के गुजर जाने के बाद सूखा भी झेलते हैं। पानी के सुख-दुख ने मिलकर बिहार के बाशिंदों को सुख-दुख की आदत डाल दी है। सूखा और बाढ़ दोनों ही कम से कम में जीवन चलाने का गुरुमंत्र सिखाते हैं। दूसरे हिस्से में रहने वाले प्रवासी बिहारियों की मजबूती व सफलता का यह एक बड़ा कारण है।

दरअसल बिहार कोसी, गंडक और गंगा सरीखी नदियों के प्रवाह के उफान और झंझावातों के बीच जीता रहा है । परंपरागत तौर पर छोटे-छोटे पोखरों और वनीकरण ने बाढ़ के मूल कारणों को काफी हद तक नियंत्रित भी रखा था। बाढ़ आती भी थी, तो कम दिनों के लिए। पहले की बाढ़ कुछ समय की तबाही लाती थी, लेकिन साथ ही ढेर सारी उपजाऊ मिट्टी और मछली लाती थी। मछली के टेडपोल मच्छरों के अंडों को नष्ट कर देते थे। इलाके को मलेरिया का प्रकोप नहीं झेलना पड़ता था।

इसमें कोई शक नहीं कि पुरातन बिहार एक जमाने में शासन, सत्ता, संस्कृति, शिक्षा, ज्ञान, नीति और राजनीति का गौरव केन्द्र रहा है। बिना पानी, प्रकृति और परम्परा को समझे कोई प्रदेश इतना गौरव नहीं पा सकता, लेकिन बीती दो-एक शताब्दियों में बिहार में भी नई पढ़ाई और दर्शन यहाँ भी पहुँचा। बिहार का माहौल कुछ ऐसा बदला कि बिहार को संवारने-समृद्ध बनाने वाले ही बड़ी संख्या में बिहार से पलायन कर दूसरे हिस्से में बसने लगे हैं। बिहार में भयानक बेरोजगारी के कारण ही शायद ऐसा हुआ। **अब बिहार की चिंता कौन करे ?**

आज बिहार के पानी की चिंता जरूरी है। बिहार का पानी बिहार के पलायन को रोकने में एक मददगार पहलू हो सकता है। अब जरा समझें कि बिहार के पानी की चिंता क्या है ? बिहार में जल जमाव की तकलीफ है। 75 लाख हैक्टेयर जमीन डूब में फंसी है। तीन फसल देने वाले क्षेत्र एक फसली हो रहे हैं। अब आप पूछेंगे कि इसका कारण क्या है?..... इसका कारण भी तकनीक ही है। उत्तर बिहार में नदियाँ बाधी गईं; डैम बनाये गये; जंगल खत्म हुए; नदियों को अविरल बहने नहीं दिया गया। अब सरकार कह रही है कि नदियों को जोड़ने से बाढ़ नहीं आयेगी। यह सब झूठा प्रचार है। बांध तो बाढ़ के दुष्प्रभाव को बढ़ाता है। मूल समस्या तो जल जमाव की है। जब बड़े बांध नहीं बने थे, तब नदियों में बाढ़ आती थी और अपने साथ उपजाऊ मिट्टी लाती थी। जब बड़े बांध बन गये तो यह मिट्टी खेतों में नहीं बैठकर नदियों के तलछठ में बैठ गई। इससे और खतरा हो गया। परम्परागत रूप से बिहार में पाल, आहर जैसे पानी के ढांचे थे। जब सरकार ने तथाकथित विकास के मकसद से जमीनें बांटीं, तो सबसे पहले इन्हीं ढांचों को अनुपयुक्त माना और तोड़ने के आदेश दिए। स्थानीय डेल्टा क्षेत्र में बाढ़ क्षेत्र की भांति ही पानी के नाम पर लूट है, तो सूखा क्षेत्र में सरकार सूखे की लूट में शामिल दिखती है। जिले से जिला लड़ रहा है। मध्य बिहार में सूखे के बहाने कई नाले तोड़ दिये गए।

जब आदमी अपने को प्रकृति का नियंता मानने की कोशिश करता है, तब प्रकृति नाराज हो जाती है और उसके लिए समस्याएं खड़ी करती है। बिहार में नदियों की बाढ़ नदी रोकने-मोड़ने से नहीं रुकेगी, बल्कि बढ़ेगी ही। जल उसकी गुणवत्ता और दूसरे खतरे भी बढ़ेंगे, जिनकी चर्चा हम नदी जोड़ के पन्नों में करेंगे। तब बिहार क्या करे ? **बिहार जल बिरादरी क्या करे ? क्या रास्ता हो ?**

जल बिरादरी जल की समृद्धि के लिए लोगों को जोड़ने, संवाद करने और कुछ जमीनी रचना का माध्यम बने। ये रचनाएं ऐसी हों, जो लोगों की पकड़ में हो; लोगों के ज्ञान, निर्णय व मेहनत से बने। बिहार में आंदोलन का नेतृत्व करने का बड़ा गुण है। नदी जोड़ परियोजना जिस बाढ़ से मुक्ति का दावा करती है, सरकार बिहार को उसके मॉडल प्रदेश के रूप में प्रदर्शित कर सकती है। बिहार जल बिरादरी को चाहिए कि वह बिहार की जल समस्या और स्थानीय पारंपरिक सामाजिक पहल से उसके बाढ़ के समाधान की संभावनाओं का समग्र अध्ययन कर तद्नुसार आगे बढ़े। अत: बिहार जल बिरादरी पर यह नैतिक जिम्मेदारी भी है कि वह देश को बताए कि नदी जोड़ परियोजना कैसे और क्यों कहीं भी बाढ़ का हल नहीं हो सकती। यहां भी दौड़ते पानी को चलना सिखाना है। सचमुच बिहार में इसकी बड़ी क्षमता है। अनोखी और समझदार पहल ही बिहार को उसका गौरव लौटा सकती है।

झारखण्ड

झारखण्ड भी कभी बिहार का ही हिस्सा था। अत: दोनों की कुछ स्थितियाँ मेल खाती हैं। हाँ ! चूंकि झारखण्ड में प्राकृतिक संपदा और समृद्धि ज्यादा है, अत: इस प्रदेश पर बाहरी गिद्ध निगाहें भी ज्यादा लगी हैं। खदान और उद्योगों की अति एक दिन इस प्रदेश को खोखला करेगी। खदानें पानी की दुश्मन होती हैं। इनसे भूजल पुनर्भरण की प्रक्रिया बाधित होती है। उद्योग जल दोहन के बड़े कारक हैं। अभी झारखण्ड को इसकी चिंता नहीं, क्योंकि अभी झारखण्ड में प्राकृतिक समृद्धि काफी है। नया प्रदेश है, अत: सपने भी नए ही हैं। औद्योगीकरण की उड़ान में भी यहाँ कुछ अतिरिक्त तेजी है। हम उद्योगों के विरोधी नहीं.... उद्योग अपना काम करें, लेकिन झारखण्ड जल बिरादरी यह सुनिश्चित करे कि ये हमारी उपजाऊ धरती, जंगल और पानी की मात्रा व गुणवत्ता दोनों को नष्ट न करने पाए। यह तभी

संभव होगा, जब उद्योग शुरू होने से पहले ही उसे पर्यावरण सुरक्षा सुनिश्चित करने के कायदों की पालना हेतु बांधा जा सके। वर्ना प्राकृतिक दोहन, प्रदूषण के साथ-साथ पानी के उपयोग में समानता के अधिकार का संकट अगले दशक में यहां एक प्रमुख मुद्दा बनेगा। आखिर एक न एक दिन तो किसी बिरसा मुण्डा को जन्म लेना ही होगा।

जल बिरादरी के सम्मेलन में पहली बार उत्तर-पूर्वी राज्य के प्रतिनिधियों ने असरदार भागीदारी निभाई। लगा कि पानी की चिंता अब वहाँ भी है, जहां सबसे अधिक बारिश होती है। खासतौर से असम, नागालैंड और त्रिपुरा जल बिरादरी के प्रतिनिधियों ने उत्तर-पूर्व का चित्र सम्मेलन में रखा।

असम

असम की बात करें तो पहाड़ी और घाटी का चरित्र ही असम का चरित्र है। हम जानते हैं कि ऊँची-उत्तुंग पहाड़ियों वाले इन क्षेत्रों में अब चट्टानें खिसकने की घटनाएँ आम हो चुकी हैं। यह अच्छा संकेत नहीं है। पानी की दृष्टि से भी बात करें तो ऐसी पहाड़ियों में जल संग्रहण एक कठिन काम है...। हां ! असंभव नहीं। विरोधाभास यह है कि पहाड़ में पानी है, फिर भी पानी का संकट है। शीत पहाड़ियों में बसावट ऊँचाई पर होती है। पर्याप्त धूप के लिए उन्हें ऊंचाई पर ही बसना है, लेकिन पानी तो बहकर नीचे पहुँच गया है। जहाँ झरनों को ऊपर रोककर उपयोग करने की क्षमता नहीं है, वहाँ तो पानी नीचे से ही ढोकर लाना पड़ता है।

पानी की बात करें तो सचमुच पहाड़ की बहनों का ही कष्ट अधिक है। जिन गांवों ने पानी को ऊपर ही उचित जगह पर रोकने की व्यवस्था बना ली है, वहां पलायन और इलाकों की

तुलना में कम है। असम की जमीन में लोहा है। अत: यह सही है कि पहाड़ पर ऊपर अधिक पानी नहीं रोक सकते, लेकिन हम इतना पानी तो रोक ही सकते हैं, जिससे वहां बसने वाली मानव आबादी और जीवों का जीवन चल जाए। तो **फिर... अड़चन कहां है?**

हम जानते हैं कि झूम खेती के चलन के कारण इस बीच असम के बहुत सारे जंगल खाली हुए हैं। झूम खेती का मतलब है कि हर बार नई जगह खेती करना। इतनी नई जगह कहाँ से आए? अत: खेती के लिए जंगलों को काटा जा रहा है। इस वजह से हर बारिश बाढ़ ही लाती है। वर्षा के दिनों में चट्टानों के खिसकने की गति भयानक रूप से तेज हो जाती है। चट्टानें खिसक कर नदी में गिरती है। उसके प्रवाह को बाधित करती हैं। इससे नदी का क्रोध बढ़ जाता है। पेड़ों के कटने व चट्टान खिसकने की वजह से ब्रह्मपुत्र नदी में बड़े स्तर पर गाद जमा हुआ है। पानी की गति अनियंत्रित होकर दोनों किनारों पर उत्पात मचा रही है। हर बार नया रास्ता..., नदी की चपेट में हर बार नया शिकार होता है । परिणामस्वरूप नदी से दूर बसे गांव भी तीन-तीन महीने पानी में डूबे रहते हैं। यह सिलसिला अब अनवरत् चलता है। इससे जीवन में हर तरह का संकट है। जब खाली पेट और उठाऊ गृहस्थी का बंजारापन सिर पर पड़ा हो, तो दिमाग भी तनाव की भाषा में आदेश देता है। यह बात और है कि पूर्वोत्तर इलाके के लोगों की सहनशक्ति और धरती से लगाव कुछ इतना है कि वे सब कुछ झेलकर भी वहीं रहते हैं, उन्हीं गांवों में। यह बड़ी बात है, **लेकिन कब तक ?**

पूर्वोत्तर की खिसकती पहाड़ियों और नदी के क्रोध को शान्त करने के लिए लगना ही होगा। जहां संभव हो, वहां रेंगते पानी को पकड़कर धरती के पेट में डालना होगा। दौड़ती नदियों को चलना सिखाना होगा। उम्मीद है कि असम जल बिरादरी इसमें लगेगी। पानी के क्रोध का दुष्परिणाम भला उससे बेहतर कौन जानता होगा। उसे लगना ही होगा। दूसरा रास्ता कहीं बाहर नहीं है, खुद असम के अतीत में है। आपको यह जानकर ताज्जुब नहीं होना चाहिए कि भारत के सबसे बड़े ताल सागर में से एक असम में है

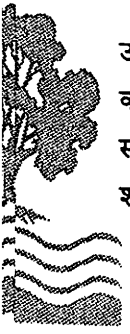

उसकी परंपरा से ही मिलेगा असम को जल समस्या से निजात का रास्ता। तब शायद असम की नसों में यदा-कदा गर्मी पैदा करने वाला बारूद भी गीला हो जाएगा। ...तब असम सचमुच कामाक्षी देवी का पूज्यनीय प्रदेश कहाएगा। ...तब असमिया चाय की चुसकियाँ शीर्ष सत्ता के मानस में गर्मी नहीं, ठंडक पैदा करेंगी।

त्रिपुरा

असम की तरह ही त्रिपुरा के पहाड़ों में भी पानी नहीं है और मैदानी इलाके में लोहे की मात्रा ज्यादा है। पानी के लिए त्रिपुरा की बहनें तीन-तीन किमी तक पैदल चलती हैं। जरा सोचें ! सिर पर वजन हो और सामने सीधी चढ़ाई हो तो एक-एक पग कितना भारी पड़ता होगा। कुल 32 लाख की आबादी और चार जिले वाले इस प्रदेश की 30 प्रतिशत आबादी आदिवासी है। अत: तीन ओर से बांग्ला देश से घिरे इस प्रांत की आजीविका जंगल और पानी से ही चलती है। अत: खेती के लिए पानी का प्रश्न बड़ा है।

नदियाँ यहाँ बारहमासी हैं। इसलिए पानी के दुरुपयोग से अभी जल की मात्रा के तो नहीं, जल की गुणवत्ता के संकट जरूर तेजी से सामने आ रहे हैं। सीवेज व कचरा इन नदियों को मैला कर रहे हैं। नदियों पर जगह-जगह बने बांध पानी की गति को बाधित करते हैं। ऐसे प्रदूषण के दुष्प्रभाव भी ज्यादा ही हैं। वजह कुछ भी हो, भूजल का स्तर यहां गिरा है। इन सभी विषयों पर सोचना है।

त्रिपुरा जल बिरादरी की राय है कि त्रिपुरा की नदियों पर बने बांध टिहरी की तरह तो नहीं हैं। इसलिए आकार को लेकर विरोध तो ज्यादा नहीं, आपत्ति इस पर है कि इतने बांध आखिर क्यों ? इनमें से ज्यादातर बांध बिजली उत्पादन के उद्देश्य से बने हैं, जबकि बिजली की स्थानीय जरूरत उत्पादन से काफी कम है; तो दूसरों को बिजली देने के लिए त्रिपुरा की नदियों पर संकट क्यों बने।

सचमुच! आज यह महत्वपूर्ण सवाल है कि सदानीरा धाराओं वाले प्रदेश उन कंगाल प्रदेशों के लिए अपने घर क्यों खाली करें, जिन्होंने अपने पानी को संजोकर नहीं रखा। प्रत्येक प्रदेश के सिर पर आसमान से पानी बरसता है। वे उसे बचा कर क्यों नहीं रखते। जब ऐसे प्रदेशों को ही अपनी चिंता नहीं, तो हिमालयी प्रदेश उनकी चिंता क्यों करें?

त्रिपुरा जल बिरादरी के प्रश्न सही है; लेकिन रास्ता तो वर्तमान स्थितियों के बीच से ही निकालना है। हमें समझना होगा कि बने बांधों के फाटक पर समाज का नियंत्रण नहीं, समाज का नियंत्रण उसकी स्वावलंबी संरचनाओं और ज्ञान पर है। समाज को जोड़कर ही उचित रास्ता निकालने का प्रयास हो। ग्राम ही बेहतर गुरु हो सकता है।

नगालैंड

उत्तर-पूर्व का एक और प्रदेश है-नगालैंड। नगालैंड दूसरे प्रदेशों से जरा अलग है। यूं भी बनावट, भूगोल, संस्कृति तथा समाज का मानस समझे बगैर किसी प्रदेश के पानी को नहीं समझा जा सकता। नगालैंड जल बिरादरी ने यहां पानी को खेती, समाज, लिंगभेद और कानूनी मुद्दों से जोड़कर देखा है। सरकार से साझे की बात की है। पूरे साल धान की फसल लेने वाली आबादी को फसल-चक्र बदलने को प्रेरित किया है। धीरे-धीरे समाज को पानी के मुद्दों से जोड़ने की कोशिश हो रही है। नगालैंड में पानी की ज़ो नीति बनी है, वह नगालैंड के जल परिदृश्य समस्या व मुद्दों की दृष्टि से बिल्कुल प्रतिकूल है। लगता है कि स्थानीय सरकार ने लोगों की समस्या को ठीक से समझने की कोशिश नहीं की। बिरादरी लगातार संवाद कायम करने के काम में लगी है। स्थानीय बिरादरी पहले खुद नगालैंड के जल परिदृश्य व उससे जुड़े सामाजिक सरोकारों पर समग्र अध्ययन तैयार करेगी। इससे व्यापक दृष्टि के साथ काम करने में मदद मिलेगी।

उत्तर-पूर्व के शेष राज्यों का कोई खास प्रतिनिधित्व सम्मेलन में नहीं था। ऐसे में उत्तर-पूर्व की इन सक्रिय जल बिरादरी इकाइयों से ही अपेक्षा करनी चाहिए कि वे अन्य प्रदेशों में पानी के सरोकार रखने वाले साथियों को संपर्क कर अपने यहां आमंत्रित करेंगे। ऐसा आपसी संवाद ही असली समझ और ज़मीन तैयार करता है।

पश्चिमी बंगाल

पश्चिमी बंगाल में पानी के पोखर ही उसे जिंदा रखे हैं। पोखर और बंगाल का अंदरूनी रिश्ता है। आज भी बिना पोखर बंगाल की कल्पना नहीं की जा सकती। पोखर बंगाल के खान-पान, रहन-सहन सभी को प्रभावित करता है, किन्तु फिर भी कस्बाई होते गांवों में इनके प्रति उपेक्षा भाव बढ़ रहा है। नदियों पर तटबंधों और बांधों को जल विकास की संरचनाएं कहा जा रहा है। क्यों... जबकि इससे संकट बढ़ रहा है। बाढ़ महीनों टिकने लगी है। बढ़ती गाद की वजह से ऐसा हो रहा है। 1978 से लगातार ऐसी बाढ़ आ रही है।

इधर हावड़ा जिले में सरस्वती नदी है। पहले इसमें पानी के जहाज चलते थे, आज पानी नहीं है। इस नदी के लिए सरकार की तरफ से एक बचाव कमेटी बनाई है। इसके तहत18 करोड़ रुपये आये हैं, पर नदी बनाने के लिए सरकार ने अब कोई कदम नहीं उठाये। यह स्थिति अच्छी नहीं है। प्रदूषण बहुत फैल रहा है। पता लगा है, ये आर्सेनिक (संखिया) की वजह से है। मुर्शिदाबाद, मालदा, हावड़ा आदि तीन-चार जिलों के कुछ हिस्सों में शरीर में अजीब तरह की बीमारियाँ फैल रही हैं। सारे शरीर में घाव निकल आते हैं। जगह-जगह से खून निकलता है। इसकी रोकथाम कैसे हो? तालाबों का पानी गन्दा होने से कैसे बचे? तालाबों का जल संग्रहण क्षमता कैसे बढ़े? समुद्र में बहकर जाता मीठा पानी कैसे रुके ?

कुछ दिन पूर्व ही बाढ़ से 200 घर बह गये। नामोनिशान नहीं रहा। जिस भी क्षेत्र में पानी आया, बहाकर ले गया। पहले बाढ़ और फिर सूखा। यहां अकाल की स्थिति पैदा हो गई है। मीठा पानी तो बह गया, ज्वार-भाटे से खारा पानी बढ़ रहा है। फरवरी से जुलाई तक तटीय क्षेत्र का सारा पानी खारा हो जाता है। दूसरी ओर उद्योगों का सारा कचरा बहकर बंगाल तक पहुँचता है। गंगा नदी बहुत बुरी तरह प्रदूषित है, स्थिति चिंतित करती है। थोड़ा बहुत जन जागृति का काम हो रहा है। गांव में जाकर बताते हैं "उनसे बचो, जिन्होंने पानी को बोतल में बन्द कर रखा है। पानी के बिना तो हम मर ही जायेंगे।" जल बिरादरी के साथी अपने-अपने स्तर पर जल संग्रहण क्षमता बढ़ाने का काम कर रहे हैं।

दरअसल बंगाल में पानी की कमी नहीं है, किन्तु एक ऐसा वर्ग खड़ा हो गया है, जिसने पानी और भूमि पर कब्जा जमा लिया है। अब पानी के दुरुपयोग की समस्या भी खड़ी हो गई है। सरकारी नीतियाँ परस्पर विरोधी हैं। उद्योगों को बहुत सारा पानी मिलता है और कहीं-कहीं पीने के पानी की भी कमी पड़ रही है। अब जैसे पेप्सी को ही भूजल निकालने की अनुमति दे दी गई है ; इससे अर्सेनिक की समस्या बढ़ी है। हावड़ा में एक कसाईखाना खुला है। 10,000 किलो पानी प्रतिदिन भूगर्भ से निकल रहा है। इससे भी 5-7 किलो मीटर में आर्सेनिक की समस्या पैदा हो गई है। विरोध शुरू हो चुका है। पुरुलिया और बाकुड़ा जैसे इलाकों में पानी कम होने का संकट है, तो उत्तर-पश्चिमी बंगाल में पानी के उपयोग का जो तरीका है; उससे गम्भीर स्थिति पैदा हो रही है।

अतीत बताता है कि जहां फरक्का बैराज ने लाखों मछुआरों को बेरोजगार बनाया, वहीं धरती

से प्रतिदिन कई हजार लीटर पानी खींच रहे उद्योगों के कारण खेती का रोजगार भी छिनने ही वाला है। पानी के न्यायोचित वितरण पर भी गौर करना जरूरी है। कारण कि समानता के लिए संघर्ष को आधार बनाकर जनमत हासिल करने वाली स्थानीय वामपंथी सरकार भी जल का व्यावसायीकरण करना चाहती है। इससे वाम विचारधारा का क्या होगा ? यह तो पता नहीं; लेकिन जल वितरण में समानता और पानी पर समाज का हक तो नहीं ही बचेगा। **यह सत्य है।**

सरकार को समझाना होगा कि पानी के निजीकरण से बंगाल पोखरों का देस नहीं बचेगा। जल व्यापार की वस्तु हो जाएगा। नदी जोड़ से जो बड़ी संरचनाएं बनेंगी, वे एक दिन परिवारों को तोड़ेंगी.... रोजगार को तोड़ेगी। बेहतर हो कि समाज, सरकार, संस्थाएं सब मिलकर स्थानीय जरूरत के मुताबिक नीति व काम तय करें। जैसे बाकुड़ा-पुरुलिया में सतही जल को बेकार जाने से बचाने के लिए मजबूती से काम करने की जरूरत है।

अकेले ही एक तालाब को पुनर्जीवित करने वाली निरुपमा बहन को याद करते हुए सम्मेलन ने उम्मीद जताई कि ऐसी बहनें व काम बंगाल में पानी की ताकत बनेंगे। हाँ, बंगाल जल बिरादरी से अभी जन जुड़ाव कम है, उसे बढ़ाने की जरूरत है।

महाराष्ट्र

महाराष्ट्र के पास पानी का समृद्ध अतीत है। यहां पानी की जानकारी भी खूब है। अब चूंकि महाराष्ट्र भारत की आर्थिक राजधानी का प्रदेश है, अत: बीते 50-60 सालों में उसने विकास के सभी नए मापदण्ड छूने की जुर्रत की है। इससे महाराष्ट्र कुछ समय के लिए पानी का अपना दर्शन भूल गया है। विदर्भ-मराठवाड़ा-द्रोणगिरि सभी जगह पानी का संकट है।

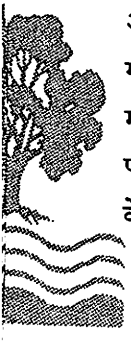

अजीब बात है। गांवों में पीने के पानी का संकट है; तालाब नष्ट हो रहे हैं और सरकार है कि गांव-गांव में शौचालय बनाने में लगी है। देश में बने कुल बड़े बांधों में से 40 प्रतिशत महाराष्ट्र के हिस्से में ही आये हैं। बावजूद इसके प्रदेश की 36 छोटी-बड़ी नदियों में से 30 पानी की कमी से जूझ रही हैं। एक तरफ गन्ना, अंगूर, केला, संतरा, प्याज तथा चीनी-शराब के उत्पादक अंधाधुंध पानी खींच रहे हैं, तो दूसरी तरफ कई हजार गांव पीने के पानी के लिए

टैंकरों पर निर्भर हैं। दुर्भाग्यपूर्ण है कि वोट बैंक की राजनीति इस गंभीर परिदृश्य की अनदेखी कर बीयर को शीतल पेय घोषित करवाने में लगी है।

विध्वंस के खिलाफ संघर्ष के साथ-साथ रचना का सिलसिला आगे बढ़ाने के लिए जल बिरादरी साझी पहल की जरूरत बड़ी शिद्दत के साथ महसूस करती है, लेकिन यह हो कैसे ? महाराष्ट्र में जल का निजीकरण-व्यावसायीकरण अत्यन्त गंभीर मुद्दा बनने जा रहा है। इस पर तत्काल कार्रवाई की आवश्यकता है। हालांकि महाराष्ट्र जल बिरादरी निजी परियोजनाओं से सम्बन्धित विस्तृत एवं छोटी से छोटी जानकारी हासिल करने के लिए सूचना के अधिकार का इस्तेमाल कर रही है। महाराष्ट्र जल बिरादरी समय-समय पर कदम तो उठाती है, लेकिन प्रदेश में जल से सरोकार रखने वाले सभी साथियों का आत्मा से जुड़ाव नहीं हो पा रहा है। बिना जुड़े जल बिरादरी एक प्रभावी शक्ति नहीं बन सकती और महाराष्ट्र में बिना प्रभावी शक्ति के व्यावसायीकरण को रोकना संभव नहीं। इससे पहले कि व्यावसायीकरण महाराष्ट्र के गले की फांस बने, हमें आत्मा से जुड़ना होगा।

महाराष्ट्र में जल बिरादरी ने हजारों बच्चों व महिलाओं के बीच जल संरक्षण संबंधी साक्षरता का अच्छा काम किया है। अन्य प्रदेश उनसे सीखें। राज्य जल बिरादरी ने सम्मेलन को विश्वास दिलाया कि वर्ष 2006 में वे महाराष्ट्र के पानी को संजोने में निर्णायक भूमिका निभायेंगे। महाराष्ट्र ऐसा प्रदेश है, जहां की राजनीति हमारी खेती से चलती है। यहाँ का पानी यहाँ की राजनीति में उबाल ला सकता है। देखना है कि प्रदेश कब चेतेगा ? अभी अमरावती और आसपास के इलाके में लोक निर्माण विभाग को कुछ चेतना आई है। उसने घर-खेत, सड़कों को पानी बचाने में लगाया है। उसका प्रभाव देख खुद विभाग आत्मविभोर है। सम्मेलन में उसके सबसे बड़े ऑफिसर ने शिरकत कर बताया कि उनमें आई चेतना ऐसे इलाके की खुशहाली में योगदान कर रही है। भारत में सबसे अधिक संतरा अमरावती ही पैदा करता रहा है, लेकिन संतरे की कमाई के लालच ने वहाँ बोरवैल 1200 फीट की गहराई में उतार दिए थे। पानी गया, तो संतरे भी जाने ही थे, सो गए। वर्धा नदी के सतही पानी से कितना काम चलेगा, जब धरती के भीतर का पानी ही सोख लिया गया है। खैर !... चेतना लौटी है। जब जागे, तभी सवेरा।

...उम्मीद है कि महाराष्ट्र जागेगा।

आत्म मोह की तंद्रा एक दिन टूटेगी। समय आ गया है।

आंध्र प्रदेश

भारत के एक नामी वैज्ञानिक रहे डा. विश्वेश्वरैया ने कभी आंध्र प्रदेश में बांध के रूप में एक बड़े सपने की नींव रखी थी। सपना था कि आंध्र के खेतों में समृद्धि पसर जाएगी। एक-दो पीढ़ी के खेतों में यह समृद्धि दिखी भी, लेकिन खेती और उद्योग में पानी के लगातार दोहन, पानी की बर्बादी और प्रदूषण ने मिलकर ऐसे बांधों की उपयोगिता पर सवालिया निशान लगा दिया। 40 तालाबों से समृद्ध हैदराबाद से तालाब क्या गए, स्थानीय मूसी नदी सर्वाधिक प्रदूषित नदी में शुमार हो गई। इसका प्रदूषण इतना भयावह है कि नदी के आसपास के कुएँ-ट्यूबवैल सभी में प्रदूषित जल उतर आया है। आंध्र प्रदेश जल बिरादरी की सदस्य संस्था ने नदी किनारे के बच्चों-महिलाओं के स्वास्थ्य का सर्वेक्षण किया, तो स्थिति भयावह मिली। अतः विरोध काफी मुखर है।

स्वर्णमुखी नदी सूख चुकी है। पुगनूर समस्याग्रस्त है। खयम में कोकाकोला की फैक्ट्री पानी खींच रही है। अनन्तपुर में कुआँ खोदने पर भी पानी नहीं मिला, तो आत्महत्याएँ हुईं। अजीब हालत है कि एक तरफ पानी की लूट है, बाजारू खेती है, बड़ों के पास पानी है, तो दूसरी तरफ गरीब बेपानी और बेजान है। अनन्तपुर, महबूबनगर की कई घटनाएँ रिकार्ड में हैं। ताज्जुब है देश में सबसे कम पानी राजस्थान में बरसता है और पानी के लिए सबसे अधिक आत्महत्याएं आंध्र प्रदेश में हुईं। इसी से एक पार्टी की सरकार गई।

तेलंगाना में छोटे-छोटे बांधों के प्रताप से नदी जिन्दा रहती थी। अभी सब कुछ छूट रहा है। नई सरकार के आने से प्रदेश ने उम्मीद लगाई थी। गांवों में पानी के प्रोजेक्ट चल रहे हैं। जल बिरादरी की राय है कि सरकारें तो अब खुद ही परजीवी बनती जा रही हैं। फिर भला उन पर निर्भर रहकर समाज स्वावलंबी कैसे बन सकता है। समाज को यहाँ पानी की लूट रोकने खुद आगे आना होगा। आन्ध्र की खेती खुद संयमित हो। बड़े खेतीदारों से लेकर उद्योग तक सभी को पानी का संयम अपनाना होगा। फसल-चक्र और जीवन शैली कम पानी के अनुरूप नहीं है। जल पुनर्भरण के काम के दर्शन को समाज भूल जाए, तो फिर भला पानी का संकट कैसे हल होगा ? राज भी सोचे कि कम्प्यूटर से आंकड़े निकल सकते हैं, पानी नहीं। चन्द्रबाबू पानी का प्रायश्चित करें। नई सरकार पिछली सरकार के अनुभव से कुछ सीखे न सीखे, समाज को खुद अपने पानी को बचाना... सहेजना होगा; तभी समाज पानी

की लूट रोकने की लड़ाई लड़ सकेगा। पानी की मांग कम करने तथा प्रदूषण नियंत्रण की दिशा में भी आंध्र प्रदेश जल बिरादरी संभवत: कुछ करेगी। दरअसल आंध्र के समाज में पानी का आंदोलन तो है, नलगौंडा में तीस साल पहले ही पानी का आंदोलन चला था, लेकिन पानी के संकट के खुद समाधान की ललक और पहल का भरोसा जगे, तब बात है।

दक्षिण तटीय प्रदेश

दक्षिण तट हमेशा ही प्राकृतिक रूप में समृद्ध रहा है। कारण हमारे अधिकतर जल प्रवाह उत्तर से दक्षिण की ओर बहते हैं। अब यदि सरकार ने नदी जोड़ परियोजना वाकई लागू करने की जिद् की, तो दक्षिण तटीय प्रदेश भयानक जल संकट के शिकार होंगे। तब बिना सुनामी भी उजड़ने का संकट होगा। पानी की मात्रा से ज्यादा बड़ा संकट यहां खारेपन का होगा। समुद्र में मिलने वाली नदियों में अभी पानी की होती कमी के कारण जितनी मात्रा में मीठा पानी समुद्र में मिलता था, वह नहीं मिल रहा। परिणाम जानना हो, तो केरल के गांवों में जाएं। तटीय गांव खारेपन के नए संकट से जूझ रहे हैं। नदी जोड़ और बढ़ाएगा। यूं भी दक्षिण दोहन और प्रदूषण का बड़ा शिकार बन रहा है। दक्षिण को भी शहरीकरण की हवा लगने लगी है। झीलों के लिए मशहूर बंगलूर में झीलें कम, बस्तियां ज्यादा आबाद हो रही हैं। बंगलूर तय करे कि उसे खूबसूरती व खुशहाली कौन देगा ? ...पलायित आबादी या झीलें ?

शराब, शीतल पेय और पेयजल उत्पादक कम्पनियों के साथ-साथ अन्य मकसद से हो रहा भूजल दोहन तथा जल प्रदूषण दक्षिण भारत के राज्यों में एक बड़ा मुद्दा है। तमिलनाडु अपने पानी के लिए काफी कुछ केरल पर निर्भर है, जबकि केरल खुद पानी से जूझ रहा है। नदियों में पानी घट रहा है। पानी के बंटवारे से केरल और तमिलनाडु में दूरी बढ़ी है और राजनीतिज्ञों को रोटी सेंकने के मौके भी बढ़े हैं। विवाद अन्तर्राज्यीय स्तर से नीचे उतर कर समाज के बीच टकराव का कारण बनता नजर आता है। पर्यटन के लिए मशहूर गोवा में भले ही 120 इंच तक बारिश होती हो, लेकिन नवम्बर के बाद यहां भी सतही जल का संकट ही रहता है। हमें इन अनुभवों से सीख लेनी चाहिए। इन मुद्दों से तभी निपटा जा सकता है, जब दक्षिण में जल बिरादरी की राज्यवार इकाइयाँ आपसी तालमेल बनाएं और निरन्तर संवाद जारी रखें।

जल सम्मेलन में दक्षिण तटीय राज्यों का प्रतिनिधित्व सीमित ही था। दक्षिण को चेतना ही होगा। कारण कि केन्द्र सरकार की नजर सर्वाधिक प्राथमिकता वाली नदी जोड़ परियोजना और पानी के लिए कर्ज और व्यावसायीकरण पर है। खारापन दक्षिण तटीय प्रदेशों को ले डूबेगा। उम्मीद है कि दक्षिण डूबना नहीं चाहेगा।

उल्लेखनीय है कि दक्षिण तटीय प्रदेश ही नहीं, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उड़ीसा, झारखण्ड, छत्तीसगढ़, उत्तर-पूर्व के शेष राज्यों तक संघ शासित प्रदेशों से भी इस सम्मेलन में असरदार प्रतिनिधित्व नहीं था। यह लिखते हुए अच्छा तो नहीं लग रहा, लेकिन सच यही है। इसलिए इन प्रदेशों के जल परिदृश्य, मुद्दों और जल बिरादरी की भूमिका पर सम्मेलन खास विवरण नहीं पा सका।

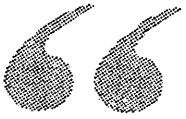

यूं तो समाज, सरकार और निजी हाथ सभी मिलकर देश में पानी की टिकाऊ और स्वावलंबी व्यवस्था में लगें; इस पर चर्चा होती, लेकिन राज्यवार उभरते परिदृश्य ने मजबूर किया कि जल सम्मेलन के मुख्य सत्र में बिरादरी पानी के नए सियासी-नीतिगत संकट और उससे जुड़े पहलुओं पर विचार करे।

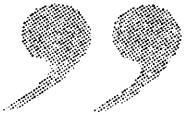

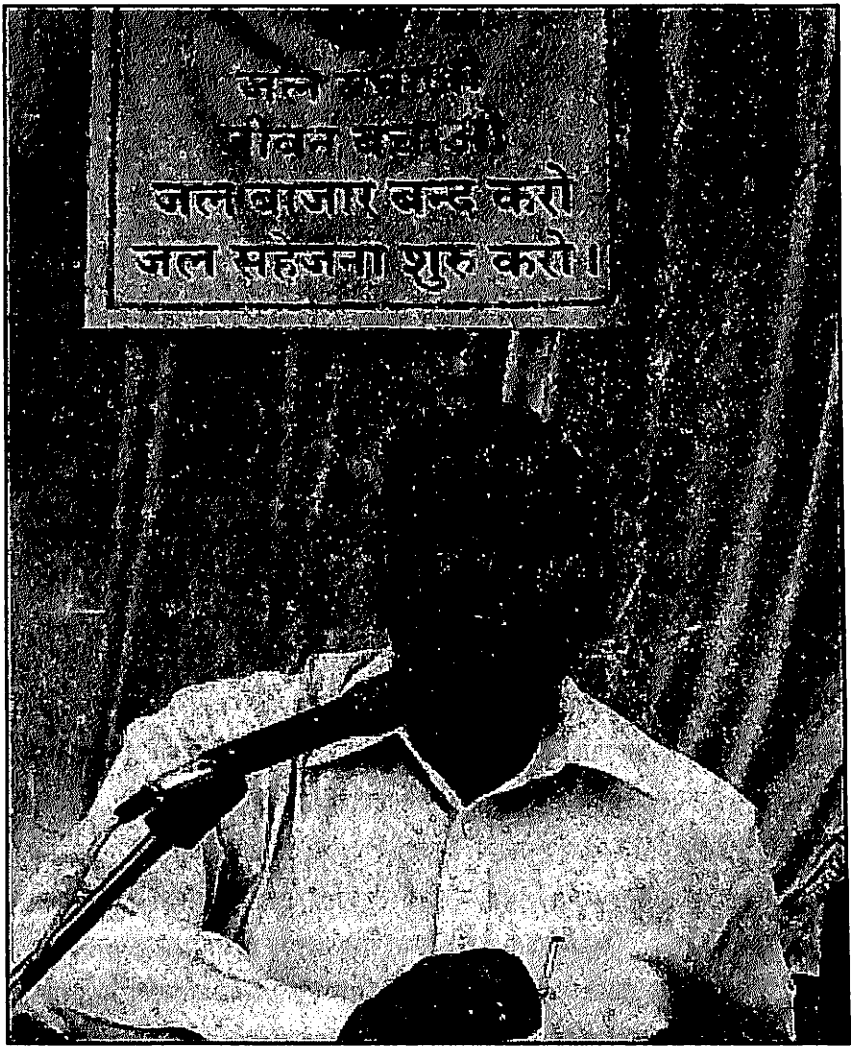

मुख्य सत्र

11-12 नवंबर, 2005

◆ निजीकरण ◆ नदीजोड़ ◆ जल प्रदूषण ◆ जल विवाद और समाधान ◆ जल नीति व कानून ◆ जल साक्षरता ◆ विकेन्द्रीकृत सामुदायिक जल प्रबन्धन ◆ जल बिरादरी की भूमिका ◆ भीकमपुरा जल घोषणा पत्र

निजीकरण

पानी के निजीकरण का मसला आज चर्चा में है। जबकि भारत में पानी पीढ़ियों से सामूहिक स्रोत रहा है। हमारे नदी-नाले-तालाब सब साझे स्रोत हैं। अपनी जरूरत पूरी करने के लिए हम समय-समय पर इनसे पानी लेते रहे हैं। इस तरह पानी की पूरी व्यवस्था समाज के हाथ में थी, लेकिन सरकार ने जो कुछ भी बनाया.....कुएं, बांध और नहरें.... इन सबका प्रबन्धन अपने पास रखा। सरकार जानती है कि पानी ऐसी जरूरी चीज है, जिसके बिना जीवन नहीं चल सकता। दो दिन पानी न मिले, तो ही मुश्किल हो जाएगी। इसीलिए ऐसे महत्वपूर्ण और दुर्लभ तत्व का प्रबन्धन समाज के हाथ में होना चाहिए, न कि सरकार के हाथ में। पानी के इसी गुण के कारण कई निगाहें आज पानी को व्यापार की वस्तु के नजरिए से देख रही हैं। वे जानते हैं कि ऐसी वस्तु जिस भी क़ीमत पर मिलेगी, लोगों को खरीदनी होगी। अभी तो पानी समाज का है। बाजार के हाथों बेचने से यह 'व्यापार की वस्तु' बन जाएगा।

निजीकरण का विचार पूरी तरह नया नहीं है। पहले भी गांवों में हरिजनों को दूसरी जातियाँ अपने कुओं से पानी नहीं पीने देती थीं। शहरों में टैंकरों से पानी बेचा ही जा रहा है। शहरी घरों में नल से आने वाले पानी के बदले में पैसा देना ही पड़ता है। गांव में भी लोग ट्यूबवैल का पानी दूसरे को बेचते ही हैं। यह भी निजीकरण ही है, लेकिन अब जिस तरह का निजीकरण आ रहा है वह एकदम भिन्न योजना और नजरिए वाला है। इसका मकसद अपने हिसाब से अपनी दर पर पानी बेचना तो है ही; सबसे बड़ा मकसद है, पानी पर कब्जा करना। इसके पीछे अंतर्राष्ट्रीय ताकतें काम कर रही हैं। परिणामस्वरूप सबसे पहले गरीब आदमी पानी से वंचित होगा। शहर में पानी की आपूर्ति अभी ठीक नहीं है, तो विश्व बैंक कहता है "सरकार में कमी है। सरकार के पास पैसे भी नहीं हैं। अत: सरकार इस काम को ठीक नहीं कर सकती। इसे हम ठीक करेंगे। इन्हें निजी हाथों में सौंप दिया जाए। निजी हाथ अपने आप पैसे और पानी की व्यवस्था कर लेंगे।"

अब आप इतना सोच लें कि कोई भी व्यापारी.... कम्पनी व्यापार क्यों करती है? जाहिर है, मुनाफा कमाने के लिए। जब व्यापारी बड़ा है, तो खर्चे भी बड़े होंगे। परिणाम यह होगा कि निजीकरण होते ही पानी की कीमतें चार गुना बढ़ जाएंगी।

सरकारें बराबर झूठ बोल रही हैं कि वे नदियों को नहीं बेच रहे हैं। कह रही हैं कि निजी कम्पनियाँ तो उचित दर पर पानी बेचेंगी, लेकिन छत्तीसगढ़ की शिवनाथ नदी के मामले में क्या हुआ? इसे रेडियस कम्पनी को बेच दिया गया। उसने कहा कि नदी का जो 23 कि.मी. का वह हिस्सा उद्योग लगाने के लिए मिला है, वह पूरा उसका है। कोई दूसरा उस हिस्से से पानी या मछली नहीं ले सकता। इसके लिए लोगों को संघर्ष करना पड़ा। अब आप ही बताइए! सिर्फ पानी कहां बिका? **यह तो स्रोत ही बिक गया।**

हालांकि आप देखेंगे कि बड़ी कम्पनियों को भी बहुत दिक्कत आएगी। जो गरीब पानी का पैसा नहीं अदा कर पाएंगे, उनका पानी काटने के लिए विवाद होंगे। झगड़े बढ़ेंगे। समाज से लड़ना आसान नहीं होता। कम्पनियाँ सब जाएंगी। इसीलिए निजीकरण करने से पहले कम्पनियों के लिए मैदान साफ किया जा रहा है.... समतल किया जा रहा है। कई जगह सरकार ने अभी से कीमतें बढ़ा दी हैं, ताकि जो निजी कम्पनियाँ काम करें, उन्हें कोई दिक्कत न आए। उन्हें भी शुद्ध लाभ प्राप्त हो। मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, दिल्ली सभी राज्यों की सरकारें इसी काम में लगी हैं।

वैसे यदि आप बात करें, तो विश्व बैंक कहता है-''हम निजीकरण करना नहीं चाहते। हम तो बस! पानी के क्षेत्र में सुधार करना चाहते हैं। इस सुधार का विश्व बैंक ने जो ढांचा बताया है, उसमें कहा है कि पानी की दरें बढ़ा दो; जो पैसा नहीं दे सकते, उनके नल काट दो। जिन्हें मुफ्त पानी मिल रहा हो, उसे रोक दो। ''यह कम्पनियाँ तालाबों और बांधों को भी अपने हाथों में ले रही हैं। उनका कहना है कि सिंचाई के लिए तालाबों पर नियंत्रण करना होगा। सिंचाई तंत्र से जुड़े कर्मचारी बदलने होंगे। इसके लिए कुछ अलग व्यवस्था करनी पड़ेगी। सरकारें कम्पनियों से कह रही हैं कि पानी का सब झगड़ा अपने हाथ में ले लो। पैसा लेना-देना सब आपके हाथ में होगा, हम कुछ नहीं करेंगे।

भारत की 20 राज्यों में यही प्रक्रिया चल रही है। विश्व बैंक ने 20 राज्यों को पानी के लिए कर्ज दिया है। ये सारा शिकंजा पिछले कुछ वर्षों से हमारे ऊपर कसा जा रहा है। मध्य प्रदेश में विश्व बैंक ने जिन शर्तों पर पानी के लिए कर्ज दिया है। उनमें दो बातें प्रमुख हैं: पहला- पानी की बिक्री दर बढ़ानी पड़ेगी। दूसरा- जल बोर्ड के ढाँचे का पुनर्गठन करने के लिए कर्मचारियों को बाहर निकालना होगा। जम्मू-कश्मीर और उत्तर-पूर्वी राज्यों में भी इसी तरह

की बातें चल रही हैं। दिल्ली, लुधियाना और औरंगाबाद को भी शीघ्र ही निजी हाथों में सौंप दिया जाएगा।..... तो इस तरह पानी का निजीकरण होगा। अत: हमें अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए कि अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष और विश्व बैंक किस रास्ते पर चलकर क्या हासिल करना चाहते हैं? हमारे समाज में थोड़ी बहुत सुगबुगाहट तो है। केरल, उत्तर प्रदेश और राजस्थान में कोक-पेप्सी को लेकर संघर्ष भी हो रहा है, अभियान चल रहे हैं, लेकिन उन्हें प्रभावी बनाने के लिए और ताकत जोड़नी होगी।

दिल्ली की सरकार बराबर कह रही है कि वह पानी का निजीकरण नहीं कर रही है। सच यह है कि एक दिसम्बर,2005 से वे निजीकरण के रास्ते पर और आगे बढ़ेंगे। अभी दिल्ली जल बोर्ड एक सरकारी विभाग है। जल वितरण के लिए दिल्ली को 21 जोन में बांटा गया है। प्रत्येक जोन को सरकार ने विदेशी कम्पनियों को सौंपने का मानस बनाया है। ऐसा लगता है कि सरकार पूरी तरह कम्पनियों की सेवा में लगी है। 1988 में दिल्ली सरकार ने जब विश्व बैंक से जल सुधार के नाम पर कर्ज लेने की अपेक्षा की थी, तो 35 कम्पनियों ने टेंडर डाले थे। विश्व बैंक चाहता था कि प्राइज वाटर कम्पनी को ठेका मिले। अत: छह कम्पनियों की अंतिम सूची में उसे भी शामिल किया गया। इससे निजीकरण के पक्षधरों की नीयत समझ में आ जानी चाहिए। उत्तरांचल के श्री शमशेर सिंह बिष्ट ने फलिन्डा में भिलंगना नदी को एक कंपनी को सौंपे जाने के दुष्परिणामों की चर्चा की। इसका जिक्र हम पिछले पन्नों में उत्तरांचल राज्य विवरण के अंतर्गत कर चुके हैं।

श्री श्रीपाद् धर्माधिकारी ने भारत में निजीकरण और बाजारीकरण का विस्तृत विवरण सामने रखते हुए कहा कि हम बाजारीकरण और निजीकरण को एक मानकर चर्चा करें। इन दोनों को अलग न मानें। श्री जेड हसन ने कहा– "आबादी बढ़ रही है; साथ-साथ पानी की लागत भी बढ़ रही है। ...तो यह पैसा कहां से आयेगा? पानी पर पैसा लगाने के लिए कहीं से तो पैसा लेना होगा। अब सरकार के पास पैसा नहीं है तो विश्व बैंक से लेती है; जैसे हम अपनी जरूरत के लिए अपने बैंक से लेते हैं। यह पैसा वापस लौटाने के लिए टैक्स तो लगेगा ही। गांवों में सिंचाई और शहरों में पीने के पानी की जरूरत पूरा करने के लिए बहुत सारा निवेश चाहिए। इसके लिए आवश्यक ढांचे का विकास, फिर उसे चलाना, उसका रखरखाव...इसके लिए निजीकरण जरूरी है।"

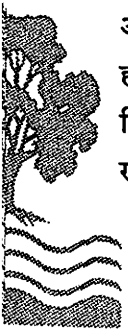

उपस्थित जन श्री हसन के बयान से संतुष्ट नहीं हुए। बहन सविता ने प्रश्न उछाला आप पानी को मूलभूत जरूरत बताकर उसे पूरा करने का ढांचा समझा रहे हैं। पानी सिर्फ मूलभूत जरूरत नहीं है; यह हमारा मूलभूत अधिकार है। जनता को उसका अधिकार देना सरकार के लिए सेवा का काम है। जब तक अधिकार नहीं मागेंगे, तब तक पानी का बाजार नहीं रुकेगा। यदि हमारे प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और उन पर विदेशी कब्जा रोकना है, तो पानी के अधिकार को संवैधानिक दर्जा देना होगा।

उत्तरांचल जल बिरादरी के श्री शमशेर सिंह बिष्ट जी ने कहा-''पानी के स्रोतों की मरम्मत का काम तो हमारे यहां गांवों को दे दिया गया है, लेकिन मिल्कीयत तो सरकार की ही है। 1974 में यह निश्चित किय गया था कि स्थानीय संसाधनों पर पंचायत या नगर पालिका का अधिकार होगा, लेकिन आज तक ऐसा नहीं हुआ। हमें पानी का दाम और पानी के लिए टैक्स दोनों देना पड़ता है। ये निहायत गलत हैं।''

सवाई माधोपुर के सत्यनारायण ने भूमिहीन और छोटे किसानों का सवाल उठाया। अनुग्रह जोन ने जानकारी दी कि बंगलूर के आठ इलाकों में पानी का निजीकरण हो गया है। घर या जमीन के मालिकाना का प्रमाण दिये बगैर वहां पानी का कनेक्शन नहीं मिलेगा। शुरू में ही 2500 रुपये जमा करने होंगे। अब वहां गरीब लोग कौन सा प्रमाण पत्र देंगे?

उन्हें पानी कैसे मिलेगा?

सत्र में इजमेन्ट एक्ट के बारे में भी बात हुई। कहा गया कि वर्तमान तकनीक और मशीनों द्वारा काफी गहरे से पानी खींचने को ध्यान में रखते हुए इस एक्ट में बदलाव किया जाए। उल्लेखनीय है कि भारत सरकार ने भूजल को लेकर एक मॉडल बिल जारी किया था, जिसे आज तक ज्यादातर राज्य सरकारों ने स्वीकार नहीं किया। प्रो.कान्ता प्रसाद ने कहा ''1987 और 2002 में जो जल नीति बनी, वह जल प्रबन्धन के लिए ही बनी थी। भूजल के लिए नहीं बनाई थी। 'इजमेन्ट एक्ट' भूजल और ग्राहक अधिकार के बारे में बनाया गया था। वह आज भी लागू है। जहां तक राज्य के रिपेरियन राइट का सवाल है, तो उसके बारे में सुप्रीम कोर्ट के चार फैसले हैं। कानूनी मसलों पर यदि कोई जानकारी चाहिए, तो बाद में दे सकूंगा।''

1973-74 में संशोधन के बाद भी पानी पर कानूनी मालिकाना राज्यों का ही है। सरकार को अधिकार और पानी मुहैया कराने की अपनी जिम्मेदारी निजी हाथों में नहीं सौंपनी चाहिए। निजीकरण की प्रक्रिया द्वारा सरकार लोगों को उनका मूल अधिकार मुहैया कराने की अपनी जिम्मेदारी से भाग रही है। कुछ लोगों का विचार था कि सरकार ढांचा खड़ा करने के मामले में निजी सेक्टर की मदद ले सकती है, लेकिन आपूर्ति और प्रबन्धन की अंतिम शक्ति स्थानीय निकाय अथवा समुदाय के हाथ में रहनी चाहिए। कुछ का यह भी कहना था कि अभी जो मालिकाना राज्यों के पास है, उसे ग्रामीण व शहरी स्थानीय इकाइयों को सौंप देना चाहिए। इससे जल के प्रबन्धन, जल की योजना और संरक्षण के मामले में स्थानीय समुदाय ज्यादा जिम्मेदार भूमिका में आ जाएगा। इसके लिए जब तक सरकार पर दबाव बनाने का काम नहीं होता, तब तक सरकार अपनी नीति, कानून व कायदों में जनहित का खयाल रखने वाली नहीं। इसके लिए मीडिया की मदद लेनी चाहिए। सभी को संवेदनशील बनाना जरूरी है। इस अनचाहे निजीकरण का विरोध करने के लिए नौजवानों को साथ लेना चाहिए। उत्तरांचल, हरियाणा,कर्नाटक आदि के उदाहरण हमें संकेत दे रहे हैं कि जल्द ही बढ़ी हुई कीमतें गरीब लोगों को पानी से वंचित करेंगी।

पूरी बहस के दौरान एक मजबूत खयाल यह उभरा कि वैश्वीकरण का अब हर स्तर पर विरोध होना चाहिए। जलनीति में पहली प्राथमिकता पेयजल को, दूसरी सिंचाई और तीसरी उद्योग व अन्य को दी जाए। बहुमत की राय थी कि पानी कोई निजी वस्तु नहीं है, जिसे कुछ लोग नियंत्रित करें। समूह ने स्पष्ट कहा कि उपयोग के आधार पर जल नीति बननी चाहिए, जीवन जीने के लिए पानी का उपयोग तथा उद्योग और व्यवसाय के लिए पानी का उपयोग दो भिन्न बातें हैं। एक जीवन बचाने के लिए और दूसरा मुनाफा कमाने के लिए। इसी भेद के आधार पर पानी की उपभोक्ता दरों का निर्धारण होना चाहिए। कुछ प्रतिभागियों ने भूजल के अन्यायपूर्ण दोहन को रोकने के लिए सरकार को अग्रणी भूमिका में आने को कहा। यह राय भी हुई कि आम आदमी और संस्थानों के बीच पानी सम्बन्धी नीति कानून व मुद्दों की जानकारी होना जरूरी है। जानकारी होने से ही जागृति होगी। और तभी सही संगठन साझा बनेगा। एक राय यह भी थी कि निजीकरण की जड़ में वैश्वीकरण का बीज है। अत: वैश्वीकरण और निजीकरण दोनों को ठीक-ठीक समझना चाहिए। इस चक्र ने हमारे गांव के रहन-सहन और जीने के अंदाज से छेड़छाड़ की है। हम इन मसलों को लेकर सभी सम्भावित सहयोगियों के पास जाएं। इसके लिए जल साक्षरता अभियान चलाना जरूरी है।

नदी जोड़

बात शुरू हुई लोक और तंत्र से... कि जैसे निर्णय 1948 में होते थे, वैसे ही 2003 में भी हुए। 16 फरवरी, 1948 को जब हीराकुड बांध बना, न तो तब लोगों से पूछा गया कि क्या होना चाहिए और न ही अब। जल नीति बनी, तो भी नहीं पूछा गया कि नीति कैसी हो ? यह ठीक नहीं है।

सुप्रीम कोर्ट को भी तमाम बातों का शुभ-अशुभ सोचे बगैर फैसला नहीं सुनाना चाहिए। बुंदेलखण्ड में केन-बेतवा जोड़ प्रस्तावित नदी जोड़ परियोजना का पहला जोड़ है। पहली आवाज वहीं से आई। सरकार ने इस जोड़ का अध्ययन करते वक्त पर्यावरणीय और विस्थापन लागत का आकलन नहीं किया। साथ ही केन में पानी अधिक दिखाने के लिए बेतवा में मांग अधिक दिखाने की पक्षपातपूर्ण कोशिश की गई है। अध्ययन में और ढेरों खामियां हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि इस जोड़ को लागू करने से पहले लक्ष्य क्षेत्र की भूजल ग्रहण और उपयोग क्षमता का न तो आकलन किया गया और न ही उसके उपयोग को पहली प्राथमिकता माना गया। जबकि नदी जोड़ की तुलना में यह बेहतर विकल्प है। दिलचस्प तथ्य यह है कि सरकार भी अभी इस प्रथम जोड़ के अध्ययन को लेकर आश्वस्त नहीं दिखती।

प्रश्न यह है कि जिस गठबंधन की सरकार ने नदी जोड़ को अपने चुनावी घोषणा-पत्र का प्रमुख एजेण्डा बनाया था, उसे ही जनमत ने नकार दिया, तो प्रगतिशील गठबंधन सरकार के पास इसे लागू करने का नैतिक हक ही कहाँ बचा ? बावजूद इसके प्रधानमंत्री जी ने प्रस्तावित प्रथम जोड़ का उद्घाटन किया। इससे सही संकेत नहीं गया। नदी जोड़ पर चर्चा के लिए उपस्थित समूह में भारत सरकार की तरफ से श्री एन.के. भंडारी (मुख्य अभियंता) व श्री के.पी. गुप्ता भी थे। श्री भंडारी ने कहा -"मैं देख रहा हूँ कि लोगों का नदीजोड़ परियोजना पर बिलकुल यकीन नहीं है। मैं बताना चाहता हूँ कि अभी हमारी सरकार भी इस परियोजना के पहले चरण में है। अत: अभी यह सोचना ठीक नहीं कि इस परियोजना को लागू कर दिया गया है। सरकार अभी इस पर अध्ययन कर रही है। किस वर्ष कितना पानी, किस राज्य को देना है ? कहां कितनी मांग होगी ? ...और किस नदी में कितना पानी बचेगा ? कहां-कहां पर पानी की कमी है ? बहुत लम्बे संवाद के बाद सरकार ने 30

नदीजोड़ों का प्रस्ताव रखा है। 16 नदियों पर अध्ययन पूरा हो गया है। इस परियोजना का विचार भी बड़े बांधों जैसा ही है। इसमें पानी को स्टोर करके नहर द्वारा सिंचाई के लिए दे दिया जाएगा। इसके बारे में हमारा अध्ययन वेबसाइट पर है। हमने इसे आम सुझावों के लिए वेबसाइट पर रखा है। केन-बेतवा लिंक के बारे में हमने मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश की सरकार को संवाद में शामिल किया है। यह वर्तमान स्थिति है। हमने श्री राजेन्द्र सिंह को भी विचार-विमर्श के लिए शामिल किया है। उन्होंने हमें कहा था कि स्थानीय स्तर पर लोगों को इस परियोजना के बारे में जानकारी नहीं है। अत: हमें आम जन के बीच इस परियोजना के प्रति जागृति पैदा करने की जरूरत है। हम इस परियोजना के बारे में गांव और तहसील में जाकर लोगों को बताएंगे । हमें आगे-पीछे सब सोचना है। हम इस बारे में अभी सोच रहे हैं।'' इस पर सम्मेलन ने स्पष्ट कहा कि सरकार देश में बांधों और नहरों के पिछले अनुभवों से सीख ले। सरकार यह भी समझे कि नदी जोड़ का मतलब सिर्फ बांध और नहर नहीं है; यह ऐसा जोड़ है, जो बहुत कुछ तोड़ कर जुड़ेगा।

श्री जेड. हसन ने यही बात कुछ अलग ढंग से रखी। वह बड़े बांधों के पक्षधर हैं। उन्होंने कहा-''हो सकता है लोग बड़े बांधों के खिलाफ हों; लेकिन अमेरिका जैसे देशों ने बिजली की जरूरत पूरा करने के लिए बड़े बांध बनाये हैं। जैसे स्पेन में करीब 1200 मिली मीटर बारिश होती है, जिसमें से 560 मिली वर्षा का पानी वे अपने बांधों में बचाकर रखते हैं। इस तरह हमें भी सिंचाई, पीने के पानी और दूसरी जरूरतों के लिए अब कुछ ऐसा ही जल प्रबन्धन सोचना चाहिए। हमारे यहां भी भांखड़ा और हीराकुड जैसे कुछ ऐसे बड़े बांध हैं, जिनकी तुलना हम अमेरिका के बड़े बांधों से कर सकते हैं। आखिर भाखड़ा बांध के बाद से ही तो पंजाब पूरे देश के लिए अन्न पैदा कर पा रहा है। देश के गोदामों में अन्न का भण्डार भरा पड़ा है। फिर भी मैं कहता हूँ कि सरकार के पास जो भी पैसा जाता है, वह जनता का ही होता है। अत: यह जनता को ही तय कर देना चाहिए कि वह अपने संसाधनों का उपयोग कैसे करे ? ...और कौन सी परियोजना उसके लिए लाभदायक हो सकती है ? ये उसे ही तय करने दें।''

श्री एन.के. भण्डारी और श्री जेड हसन के बयान से शुरू हुई बहस के दौरान श्री वरुण आर्य, बहन सुश्री सविता गोखले, श्री सुरेश मिश्र, श्री भगवान सिंह परमार और श्री धनंजय धवड़ ने भी ऐतराज जताया। श्री धनंजय धवड़ ने उनके विभाग द्वारा अमरावती इलाके में बनाई

छोटी-छोटी संरचनाओं के भूजल, खेती, मवेशी आदि पर अच्छे प्रभाव का जिक्र किया। श्री धवड़ यह बताना चाहते थे कि श्री एन.के. भण्डारी ने बड़े बांध के पक्ष में जो बात कही, वह ठीक नहीं है। यह बहस लम्बी चली। जिसका निचोड़ अति संक्षेप में श्री सिद्धराज ढड्ढा जी ने कहा-''देश का भला चाहते हैं तो इस छत्तीस के आंकड़े को मिटाएं। संत विनोबा 13 साल तक इस गांव से उस गांव के कोने तक गये। किस लिए? ...ताकि जमीन का मालिकाना लोगों के हाथों में हो और आज आप पानी का मालिकाना छीनने की बात करते हैं। विकास का यह रास्ता सिर्फ विनाश की तरफ जाता है।''

बात को आगे बढ़ाते हुए श्री अनुपम मिश्र ने मंजिल का ठीक रास्ता बताया। उन्होंने स्पष्ट किया- ''कई बार जिस मंजिल पे हमें चलना है, रास्ता उस मंजिल को नहीं जाता। कई बार हमें पगडंडी से मंजिल प्राप्त होती है। अभी यह बात शायद समझ में न आये, क्योंकि अभी राज और समाज की सुरीली सुगंध टूट गई है। रही बात बांध और नहर की। ...तो हम जरा मरु प्रदेश की बात कर लें। मरु प्रदेश की उम्र आप जानते हैं और इंदिरा नहर की उम्र भी जानते हैं। इससे क्या हुआ? इससे एक दो-पीढ़ी तो मालामाल हो जाती है, लेकिन चौथी पीढ़ी तो उजड़ ही जाएगी। आपको पता है कि मध्य प्रदेश के तवा बांध से कितना ज्यादा रोना-पीटना मचा? ऐसी योजना लाभ देने आयी थी और बाद में हत्यारी बनी। ये सब समझने की जरूरत है। समाज का पतन तो एक लहर में हो जाता है। सरकार की स्थिति यह है कि पुलिस से लेकर डिप्टी तक सब स्तर पर भ्रष्टाचार बढ़ा है।''

श्री भंडारी की बात का उत्तर श्री राजेन्द्र सिंह जी ने अत्यन्त नम्रता से दिया, कहा ''बस ! मैं इतना कहना चाहता हूँ कि हमारे छोटे-छोटे काम दुनिया का बिगाड़ नहीं करते, कुछ अच्छा ही करते हैं। बड़ी-बड़ी परियोजनाओं से विनाश और परावलंबन का अंदेशा हमेशा बना रहता है।''

सम्मेलन के मुख्य सत्र में सर्वाधिक व्यापक चर्चा का विषय निजीकरण और नदीजोड़ ही बने। ये पानी के नए संकट हैं। इसके अतिरिक्त जल प्रदूषण, जल विवाद और समाधान, जल नीति व कानून, जल साक्षरता, परंपरागत विकेन्द्रीकृत जल प्रबंधन तथा इन सभी मसलों पर जल बिरादरी की भूमिका को लेकर गंभीर चर्चा हुई। चर्चा का अधिक विवरण न देकर हम सभी विषयों के निष्कर्ष बिन्दुओं का उल्लेख अगले पन्नों में कर रहे हैं। इस रिपोर्ट में उल्लेख कर रहे हैं।

निष्कर्ष बिन्दु

निजीकरण

* पानी प्रकृति के लिए जरूरी है। अत: इसके प्रबन्धन व उपयोग का अधिकार सरकार अथवा व्यापारी हाथों में सौंपने के बजाय प्रकृति तथा प्रकृति से जुड़े समाज को सौंपा जाए।

* पानी को सिर्फ मूल आवश्यकता कहने से काम चलने वाला नहीं; इसे मूल अधिकारों का संवैधानिक दर्जा दिया जाये। इससे जल के निजीकरण और इस पर कब्जे को लेकर बढ़ती विदेशी रुचि पर रोक लगेगी।

* सरकार पानी का मालिकाना अथवा पानी मुहैया कराने की जिम्मेदारी निजी हाथों में न सौंपे। सरकारों को चाहिए कि वह जल संकट के उचित समाधान को बेहिचक अपनाने के साथ-साथ जन भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए पुरजोर कोशिश करे।

* विश्व बैंक और बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ तीन आधार पर पानी के निजीकरण की वकालत कर रही हैं :

    1. शहरों में जल वितरण के दायित्व की पूर्ति करने में सरकारें सफल नहीं हो रही हैं।

    2. सभी को पानी की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए सरकार के पास पर्याप्त संसाधन नहीं हैं।

    3. निजी कम्पनियाँ ही अधिक सक्षम तरीके से इस दायित्व का निर्वाह कर सकती हैं।

* यदि एक बार पानी किसी भी तरह कहीं भी व्यावसायिक अथवा निजी हाथों में चला गया, उससे पानी की कीमतें ही बढ़ेंगी। तब सरकार को संसाधन जुटाने के नाम पर ऋण लेना होगा और लोगों को उसकी अदायगी कर के रूप में करनी

होगी। इससे विवाद बढ़ेंगे। अत: समाज की छोटी से छोटी इकाई को जोड़कर जल के निजीकरण-व्यावसायीकरण के खिलाफ आन्दोलन खड़ा करने की आवश्यकता है। इसके लिए हमें अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक की नीयत का खुलासा करना होगा। यदि संचार माध्यमों को निजीकरण पर नजर रखने और जनपक्ष की वकालत करने हेतु प्रेरित किया जाए, तो संचार माध्यम अहम् भूमिका निभा सकते हैं। इसी रास्ते पर चलकर सत्ता पर दबाव बनाया जा सकता है; ताकि नीति और कानून-कायदे बनाते वक्त सरकार स्थानीय हित ध्यान में रखे। यदि एक बार समाज को जल प्रबन्ध और उपयोग का मालिकाना पूरी तरह हासिल हो गया, तो पानी की मात्रा व गुणवत्ता की गारंटी स्वत: सुनिश्चित हो जायेगी।

* प्रयास कितना भी छोटा या बड़ा हो, इसे जमीनी स्तर पर लागू किया जाना चाहिए। सभी को समझना होगा कि निजीकरण-व्यावसायीकरण के असल मायने क्या हैं? इस मसले पर देश में क्या चल रहा है? दूसरे देशों में निजीकरण-व्यावसायीकरण के अनुभवों से सीखना भी जरूरी है। समाज और प्रकृति की छोटी से छोटी इकाई को न्यायोचित समानता का अधिकार दिए बगैर कोई नीति कारगर नहीं हो सकती। हमें चाहिए कि सरकार और एकीकृत जल प्रबन्धन से सरोकार रखने वाले संगठनों-समुदायों के प्रतिनिधियों की एक समिति तैयार करें। समाज को भी सीधे-सीधे पानी से जोड़ने की जरूरत है। इसके लिए समाज और संस्थाओं को हाथ मिलाने होंगे।

* सरकार पानी के जो समाधान सुझा रही है, वे सिर्फ जल की आपूर्ति से ताल्लुक रखते हैं। हमें सामुदायिक स्तर पर जल संरक्षण संरचनाओं के निर्माण की गति बढ़ा देनी चाहिए। यह आम जन को अपने स्तर पर करना होगा, ताकि पानी पर समान हक का उसका अधिकार बचा रह सके।

* स्थानीय समुदाय की सहमति से कानूनी स्तर पर प्रत्येक भूसांस्कृतिक क्षेत्र को एक ऐसा भूजल स्तर सुनिश्चित करना होगा, किसी भी हालत में जिसके नीचे बोर करने की अनुमति न हो। उस स्तर तक भूजल स्तर सुनिश्चित करने में प्रबंधन व उपभोग करने वालों की बराबर की साझेदारी हो।

नदीजोड़

1. अफसोसजनक है कि आज तकनीक और विज्ञान का उपयोग आम आदमी के लिए न होकर, लाभ कमाने के लिए हो रहा है। नदीजोड़ से आम आदमी को कोई लाभ होगा, यह समझना एक भूल है। इससे तो भारत का भूगोल और नक्शा ही बदलेगा; पर्यावरण, वित्त और समाज के जटिल संकट देश के सामने खड़े होंगे। सरकार इस परियोजना में आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय लागत का ब्यौरा देने और उसे उचित ठहराने में असमर्थ रही है।

2. यदि नदियाँ जोड़ने की जिद् हुई तो नदी जुड़ने से पहले ही जोड़ के नाम पर पानी निजी हाथों में चला जायेगा; तब पानी को मूल अधिकार के रूप में दर्ज करना मुश्किल हो जायेगा।

3. ग्रामीणों को नदीजोड़ परियोजना के बारे में अभी तक जानकारी नहीं है। अभी सरकार ने एक वेबसाइट पर परियोजना की सूचना दी जरूर है, लेकिन बिना बिजली... बिना इन्टरनेट जीने वाले गांवों के लिए इसका कोई मायने नहीं। सरकार इसे खुली चर्चा के लिए लाभान्वितों / प्रभावितों के बीच ले जाए।

4. नदीजोड़ के सांस्कृतिक, आर्थिक, भौगोलिक, राजनैतिक और पर्यावरणीय पहलुओं को ग्रामसभा के स्तर तक समझे-समझाये बगैर इस पर आम राय हासिल जानी नहीं जा सकती। सरकार को चाहिए कि पहले इस मसले पर प्रस्तावित लाभार्थियों और भागीदारों का विश्वास हासिल करे।

5. जल बिरादरी इस मुद्दे पर आम राय कायम करने के लिए हस्ताक्षर अभियान चलाये। ताकि प्रभावित जल-जंगल, जमीन और बाशिंदों की तरफ से सुप्रीम कोर्ट में जनहित याचिका दायर करने का मार्ग प्रशस्त हो। केन-बेतवा जोड़ का प्रमाणिक अध्ययन इसमें सहायक सिद्ध होगा। राष्ट्रीय सलाहकार परिषद को भी नदी जोड़ की बाबत ज्ञापन दिया जाना चाहिए।

6. नदीजोड़ के वित्तीय और पर्यावरणीय खतरों को देखते हुए सरकार नदीजोड़ के विकल्पों पर अत्यन्त गम्भीरता से विचार करे। जिस गठबंधन की सरकार ने

नदीजोड़ को अपने चुनावी घोषणा का मुख्य एजेण्डा बनाया था, उसे जनमत ने नकार दिया। स्पष्ट है कि वर्तमान गठबंधन सरकार को नदीजोड़ पर जनमत नहीं मिला है। अत: वह इसे लागू करने का नैतिक अधिकार नहीं रखती।

7. भारत की सरकार स्पेन की नए सत्तारूढ़ दल से सीखे। नदीजोड़ के आर्थिक व पर्यावरणीय आपत्तियों के चलते सत्तारूढ़ होने के एक माह के भीतर ही स्पेन की नयी सरकार ने नदीजोड़ परियोजना वापस ले ली । भारत की सरकार को चाहिए कि वह नदियों को जोड़ने के बजाय उन्हें शुद्ध और पुनर्जीवित करने की कोशिश में लगे। इसके लिए करोड़ों खर्च कर विदेशी सलाह लेने की भी जरूरत नहीं है , इसका ज्ञान पहले से ही भारत में मौजूद है। नदी नहीं, समाज को नदी से जोड़े।

जल प्रदूषण

* आज हमारी प्रकृति पानी में मानवकृत प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए संघर्ष कर रही है। उद्योग, कचरा, सीवरेज, रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक मानवकृत प्रदूषण के मूल स्त्रोत हैं।

* मानवकृत प्रदूषण से हमारी नदियाँ इतनी प्रदूषित हो चुकी हैं कि अब इनका पानी ज्यादा लम्बे समय तक पीने व सिंचाई योग्य नहीं रहेगा।

* ई-कोली, आर्सेनिक, खारापन, फ्लोराइड व नाइट्रेट के रूप में भूजल की घटिया गुणवत्ता सामने आ रही है। सतही जल में भी न सिर्फ रासायनिक, बल्कि भौतिक व जैविक प्रदूषण में भी निरन्तर वृद्धि हो रही है। अन्य कारणों के अलावा हमारी कूपमण्डूकता, जीवनशैली तथा पेड़ों की अंधाधुंध कटाई भी इसके लिए बराबर जिम्मेदार है।

* प्रदूषण का दुष्प्रभाव खेती, जमीन, पानी इन्सान तथा मवेशियों की सेहत पर दिखाई दे रहा है। जैवविविधता को समृद्ध बनाने वाले छोटे जीव भी तेजी से नष्ट हो रहे हैं। नतीजा यह है कि प्रदूषण नियंत्रण पर जितना पैसा खर्च होता, उससे कई गुना ज्यादा लोगों को अपने इलाज पर खर्च करना पड़ रहा है।

* प्रदूषण नियंत्रण के लिए काम कर रहा सरकारी तंत्र अपने ही कारणों से विफल रहा है। उद्योगों के लिए ''नियंत्रण के भीतर सर्टिफिकेट'' लेना लगभग वैसा ही है, जैसा कि वाहनों के लिए राह में खुली दुकानों से प्रदूषण नियंत्रण का स्टिकर खरीदना।

* सरकार प्रदूषण नियंत्रण कानूनों की पालना सख्ती से सुनिश्चित करे। इसके लिए प्रभावित समुदाय के बीच में प्रदूषण के साथ लक्षण व समाधान की समझ तथा जागृति पैदा करने की जरूरत है। जन निगरानी व जन भागीदारी को सुनिश्चित करना एक अहम् कदम हो सकता है। जरूरत हो तो नए कानून बनाए जाएं। जल प्रदूषण लोगों की जान लेता है। किसी की हत्या करने वाले को महज '' प्रदूषण करो और जुर्माना भरो'' से कैसे छोड़ा जा सकता है। उसके खिलाफ फौजदारी अदालतों में मुकदमा चलाने का प्रावधान हो।

* जहां तक प्रकृति प्रदत्त प्रदूषण के दुष्प्रभावों का सवाल है, उन्हें कम करने का एक ही तरीका है कि ज्यादा से ज्यादा स्वच्छ जल को धरती के भीतर उतारा जाए। इस तरह जल संरक्षण सरंचनाओं के निर्माण का काम भी एक तरह से प्रदूषण नियंत्रण का ही काम है। अत: प्रदूषण नियंत्रण तंत्र और भू-जल संरक्षण प्रबन्ध तंत्र की एकीकृत व्यवस्था बनानी होगी।

जल विवाद और समाधान

* संवैधानिक तौर पर यूं तो पानी राज्यों का विषय है, लेकिन पानी के अन्तर्राज्यीय विवाद केन्द्र के अधिकार क्षेत्र में आते हैं। इन्हें सुलझाने की कोई राज्य स्तरीय व्यवस्था नहीं की गई।

* राज्यों के विवाद ट्रिब्यूनल (अभिकरण) में सुलझाये जाते हैं। जहां एक समस्या निर्णय में देरी की है, वहीं निर्णय को लागू करना और उसका प्रकाशन भी एक समस्या ही है।

* पानी के मसले राज्य के भीतरी स्तर पर सिविल कोर्ट में जाते हैं। पानी के मालिकाना हक पर स्पष्टता न होने के वजह से विवाद बढ़ते हैं।

* जल विवादों के समाधान के लिए जल बिरादरी कुछ मॉडल सामने रखती है:

1. कावेरी नदी के लाभार्थियों के बीच विवाद सुलझाने की पहल एक फोरम के गठन से हुई। इसका गठन मद्रास इन्स्टीट्यूट ऑफ डेवलपमेन्ट स्टडीज के श्री जनक रंजन ने किया। इस फोरम ने लोगों को आपसी संवाद तथा वस्तुस्थिति की जानकारी मुहैया कराई। साथ बैठने से लाभार्थियों के बीच शक और भय के आधार खत्म हो गये और इसी के साथ आपसी विवाद भी।

2. दूसरा मॉडल अहमदाबाद स्थित गैर-सरकारी संगठन 'विकसित' द्वारा गठित लाभार्थी फोरम का है। यह फोरम बड़े बांध से जुड़े औद्योगिक प्रदूषण से सबन्धित विवाद के निराकरण के लिए गठित किया गया। प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, किसान, उद्योग, सरकार और पत्रकार सभी को इस फोरम से जोड़ पाना ही इस समस्या के समाधान का आधार बना।

3. तीसरा मॉडल राजस्थान के जिला अलवर में गठित अरवरी संसद का है। जिन 72 गांवों के प्रतिनिधि इस संसद के सांसद हैं, वे सभी गांव अरवरी नदी के किनारे के गांव हैं। अरवरी कभी सूखी हुई थी, आज एक बारामासी नदी है। इसका प्रवाह निरन्तर बना रहे इसके लिए इन गांवों ने पानी के उपयोग और प्रबन्धन के सम्बन्धी कुछ नियम बनाये हैं। इन नियमों की पालना सुनिश्चित करना ही मूल रूप से अरवरी संसद का काम है। नतीजा यह है कि आज अरवरी के पूरे प्रवाह में कोई जल विवाद नहीं है, साथ-साथ गांवों के साझे से हो रहे रचना के काम से समृद्धि और प्रभाव बढ़ रहा है।

जलनीति व कानून

* 1990 में बना भूजल अधिनियम तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक और आन्ध्र प्रदेश के लिए समस्या बन गया है। यह पानी के क्षेत्रीय चरित्र के अनुकूल नहीं है। अत: इसे तद्नुसार लागू किया जाना भी सम्भव नहीं है।

* राष्ट्रीयस्तर की कमेटी द्वारा तैयार की गई जलनीति पूरे देश के लिए मार्गदर्शक सिद्धान्त की तरह होती है; किन्तु राज्यवार अलग-अलग हल व भू-सांस्कृतिक

परिस्थिति होने से सभी राज्य सरकारें इसे पूरी तरह एक जैसा लागू नहीं कर सकतीं। ऐसा करना ही अव्यावहारिक होगा। लेकिन राज्य सरकारें कर तो यही रही हैं।

* भूगोल और सांस्कृतिक पहलुओं को ध्यान में रखते हुए स्थानीय आधार पर जल की नीति व कानून बनने चाहिए।

जल साक्षरता

* जल साक्षर व्यक्ति वह होता है, जो पर्यावरण के प्रति संवेदनशील हो जिसकी जल के प्रति श्रद्धा हो और जो जल-जंगल-जमीन को सहेजने व समृद्ध करने में विश्वास रखता हो।

* ग्राम को प्रथम आवश्यक इकाई मानकर चर्चा-परिचर्चा, पदयात्रा व जमीनी रचना के जरिए जल साक्षरता का काम किया जा सकता है।

* पानी के संरक्षण के सफल उदाहरणों तक लोगों तक ले जाना प्रेरक तथा समझ बनाने वाला सिद्ध होगा।

* जल के प्रति संवेदनशीलता का अहसास जगाना जरूरी है। नौजवानों/विद्यार्थियों पर खास जोर हो, क्योंकि वे न सिर्फ वर्तमान को प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं, बल्कि वे ही भविष्य के निर्णायक बनेंगे।

* प्राथमिक शिक्षा पाठ्यक्रम में पानी के सभी संवेदनशील भाव शामिल किए जाएं।

* संचार माध्यमों में पानी के प्रति संवेदना भाव व गंभीर मुद्दों पर समझ बढ़ाने का काम हो। संचार माध्यम समाज को जगाने में अहम् साथी होंगे। संचार माध्यम पानी के मामलों को गम्भीरता से प्रचारित करें। कठपुतली, नाटक, पदयात्रा, गीत, भजन आदि संचार के परम्परागत माध्यमों का भी भरपूर उपयोग हो।

* तरुण जल विद्यापीठ सरीखी जल साक्षरता शालाओं को विस्तार देकर जगह-जगह पानी के "नॉलेज बैंक" स्थापित करें।

* जल साक्षरता मिशन दो स्तर पर काम करे: पहला-नीति निर्धारकों की समझ बढ़ाने, उन्हें प्रभावित करने तथा दूसरा समाज को स्पष्ट सूचना देने व उन्हें उनके ज्ञान, गौरव व जिम्मेदारी का अहसास जगाने का काम।

* पानी के उपयोग का संयम व प्रदूषण रोक में जनभागीदारी भी बढ़ाएं।

विकेन्द्रीकृत सामुदायिक जल प्रबन्धन

* पानी की सभी समस्याओं का हल बांध बनाना और तोड़ना नहीं है। हमें चौकन्ना रहना होगा। प्रत्येक स्थिति भिन्न समाधान मांगती है और भारत में अलग-अलग इलाकों में पानी के मुद्दे व जरूरतें अलग-अलग हैं। इस बात को गम्भीरता से समझना बहुत जरूरी है। आवश्यक नहीं है कि उत्तर प्रदेश और केरल के जल संकट का एक जैसा समाधान हो।

* यदि विकेन्द्रीकृत सामुदायिक जल प्रबन्धन के अनोखे उदाहरणों और कार्यों को जमीन पर फैलाया जाए, तो जल के निजीकरण के पक्ष में कोई तर्क नहीं बचता। अरवरी नदी संसद पानी के सामुदायिक संरक्षण और उपयोग में संयम का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। सामुदायिक जल प्रबन्धन के प्रति शहरियों में भी आस्था जगानी होगी। नदीजोड़, बड़े बांध, निजीकरण-व्यावसायीकरण आदि जैसी केन्द्रीय पहल से लम्बे समय तक सभी को पानी नहीं मिल पायेगा। वर्षा जल संचयन का विकेन्द्रीकृत ढांचा ही एक उत्कृष्ट समाधान बन सकता है।

जल बिरादरी की भूमिका

* आज भारत का पानी दो भिन्न मोर्चों पर सहयोग की अपेक्षा रखता है। पहला मोर्चा जमीनी है। यह मोर्चा जल प्रदूषण, जल की कमी और जल की बढ़ती मांग अर्थात दुरुपयोग का है। दूसरा मोर्चा पानी के नए नीतिगत संकट है-''पानी की लूट, व्यावसायीकरण, निजीकरण तथा संकट समाधान के लिए गलत विकल्प का चुनाव।''

* दोनों मोर्चों पर समाधान की दृष्टि से खरा उतरने के लिए जल बिरादरी को पानी की रचना और अन्याय के प्रतिकार का काम साथ-साथ करना होगा। जन समझ को जोड़े बगैर यह हो नहीं सकता।

* इसके लिए जरूरी है कि पहले जल बिरादरी की प्रत्येक इकाई खुद इन संकटों और समाधानों को समझे, दूसरों को समझाए और फिर तद्नुसार कदम उठाए।

* जल बिरादरी तमाम मुद्दों पर अत्यंत सरल भाषा में संदर्भ सामग्री संकलित व प्रकाशित करे।

* जहाँ वैज्ञानिक अध्ययन या कानूनी कारवाई की जरूरत हो, बिरादरी पीछे न हटे।

* जल बिरादरी यह समझ कर कदम बढ़ाए कि उक्त लक्ष्यों की प्राप्ति कोई एक दिन का काम नहीं है। इसके लिए लम्बे समय तक काम करना होगा। सतत संवाद और जमीनी काम से ही यह निरंतरता कायम रह सकती है।

* जल बिरादरी राज्य एवं भूजल सांस्कृतिक विविधता के अनुरूप इकाइयों का व्यापक एवं सुदृढ़ ढांचा खड़ा करने में लगे।

पांचवें राष्ट्रीय जल सम्मेलन के अंतिम सत्र में सम्मेलन की सहमति से ''भीकमपुरा जल घोषणा पत्र'' जारी किया गया, जिसका मसौदा निम्नानुसार है:

भीकमपुरा जल घोषणा पत्र

1. जल बिरादरी सर्वसम्मति से जल के व्यावसायीकरण तथा निजीकरण का विरोध करती है और ऐसी व्यवस्था लागू करने की सरकार की नीयत के विरोध में राष्ट्रव्यापी सत्याग्रह का प्रण लेती है।

2. जल बिरादरी की स्पष्ट राय है कि वर्तमान जलनीति पानी के व्यावसायीकरण और निजीकरण का रास्ता खोलती है, जो कि समाज को पानी के मालिकाना हक के बेदखल करेगा। नदीजोड़ परियोजना भारत के लोगों, खेतों तथा प्रकृति की प्रत्येक इकाई को पानी नहीं पिला सकती; सिर्फ इतना ही नहीं,बल्कि यह परियोजना पानी की वर्तमान सामुदायिक जल प्रबंधन व्यवस्था को तोड़कर पानी की कमी और विवाद का गहरा संकट खड़ा करेगी। अत: जल बिरादरी के पास कोई अन्य

विकल्प नहीं है सिवाय इसके कि बिरादरी वर्तमान जलनीति तथा नदीजोड़ परियोजना का विरोध करे। बिरादरी का विश्वास है कि समुदाय आधारित जल प्रबंधन ही इसका एकमात्र व सर्वश्रेष्ठ विकल्प है। पानी को मूल आवश्यकता बनाने भर से काम नहीं चलेगा; पानी पर समाज के हक को संवैधानिक दर्जा दिया जाए।

3. जल बिरादरी मांग करती है कि सरकार प्रस्तावित लाभार्थी एवं भागीदारों को नदीजोड़ परियोजना की विस्तृत एवं छोटी से छोटी जानकारी मुहैया कराये। जब तक सरकार नदीजोड़ मसले पर जनमत प्राप्त नहीं करती, तब तक बिरादरी इस परियोजना के क्रियान्वयन को लागू नहीं होने देने के लिए दृढ़ संकल्पित है।

4. जल प्रदूषण नियंत्रण के मोर्चे पर पूरे देश में नकारा साबित होते सरकारी तंत्र को लेकर जल बिरादरी चिंतित है; अत: बिरादरी मांग करती है कि सरकार जल प्रदूषण नियंत्रण कानूनों का पालन सख्ती से सुनिश्चित करे। यदि वर्तमान कानून प्रभावी नहीं हों, तो नए प्रभावी कानून बनें और उचित निगरानी व्यवस्था सुनिश्चित करे।

5. सरकार व बाजार द्वारा समाज, संस्था व व्यक्तियों द्वारा उठाए जा रहे रचनात्मक कदमों की उपेक्षा की जा रही है। बिरादरी मानती है कि इससे सभी स्तर पर और सभी प्रकार के बीच जल विवाद बढ़ रहे हैं। नदीजोड़ ऐसे एकजुटता से ही सभी का अस्तित्व बचेगा। इस विचार को कार्यरूप देने के लिए बिरादरी पूरे देश में जल साक्षरता मिशन इकाइयों के गठन की पहल करेगी। यह मिशन छोटी जल संरचनाओं के निर्माण समेत जल से जुड़े सभी पहलुओं के प्रति संबंधित जनों की समझ बनाने व प्रेरित करने का काम करेगा।

हमारा लक्ष्य

जल स्वराज से ग्राम स्वराज

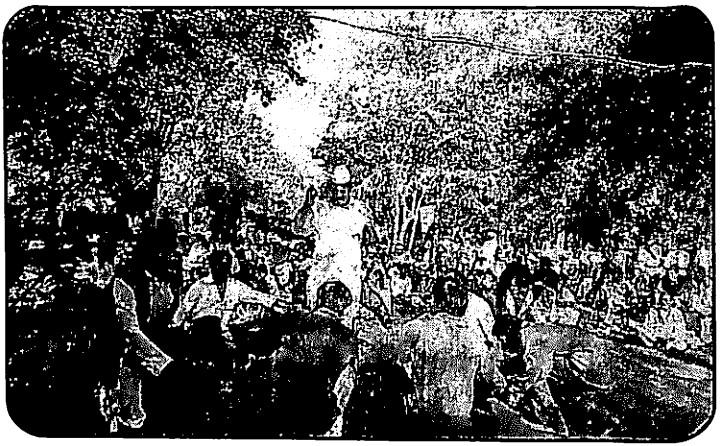

2006 ➲ जल साक्षरता वर्ष